ग्राम-देवता

ग्राम-देवता

रामदेव शुक्ल

प्रकाशक :

प्रकाशन संस्थान
क्यू-22, नवीन श
दिल्ली-110032

"चौरंगीवार्ता"

की

स्मृति में

अशोक सेकसरिया, योगेन्द्र पाल और रमेशचन्द्र सिंह

को

चुप रहीं।' हँसी का एक दौरा पड़ जायेगा और पंचायत हाथ से जाती रहेगी।

पंचों में बाबा (ब्राह्मण) लोग अधिक हैं और खदेरू की गली से होकर ही अधिकांश बाबा लोगों के घर की राहें जाती हैं। इसलिए खदेरू के खिलाफ पंचायत का यही अंजाम है। रोज पकड़ी जानेवाली खदेरू बो पंचाइत से ऊपर हैं।

लेकिन आज की पंचायत वैसी नहीं है। आज गाँव रहे चाहे रसातल में जाय। यह अन्धेर नहीं चलेगा। बाबा पट्टी, तेली टोला और चमार पट्टी के बीच आज फैसला होकर रहेगा। गोजर चौधरी का गजर बजा, 'तो ई जुटान काहे भइल बा पंचों ? सब लोग अपनी जगह सीधे हो गये। खटिया चौकी पर बाबा लोग, पंच लोग और बाबा लोगों के नाक सुड़कते बच्चे। पंचायत में बाबा लोगों के बच्चे और परोजन में करन्न को हटा दे, ऐसा कोई माई का लाल नहीं। बुलायेगा कोई नहीं, मगर आ जाने पर हटा दे, ऐसा भी कोई नहीं। किसनू की कानी आँख झपकती है, 'हाँ, भाई बोलो।'

नीचे गोल घेरे में बैठे हुए अधनंगे अधेड़ लोगों में सुगबुगाहट होती है। कुछ के चेहरे पर आतंक उभरता है। कुछ सहम गये हैं और कुछ हँस पड़ने को होकर अपने को रोक रहे हैं। मगर चुप सभी हैं। बोलता कोई नहीं। सतुआ बाबा की ललकार मौन भंग करती है, 'काहे रे साले बोलो, चोप काहे हो।' आतंक और गाढ़ा होता है। अधेड़ उमर का काला कलूटा कंगाल जैसा आदमी धीरे-धीरे औतार बाबा की खटिया की ओर बढ़ता नजर आता है। सबकी नजरें उसी पर लगी हैं। वह कुछ कहने को होकर रुक जाता है। जैसे बात गले में अटक रही हो। किसनू कोंचता है, 'बोल भाई, का चुप हो।' किसनू को देखकर वह उत्साहित होता है। फिर हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता है। बिरजू महाराज फिर टोकते हैं और वह बिना किसी की ओर देखे एक साँस में कहना शुरू करता है। अब उसे अभय मिल गया हो जैसे—'सरकार, हमार खता ई है कि हम धरम नाहीं छोड़ल चाहत बानीं।' एक साथ ही सब लोग चकित हो गये। 'कौन तुम्हारा धरम ले रहा है। बोल, बोल', सब लोग शान्त हुए तो उसने कहा, 'हम

मंगल भाई के हियां नहीं खाये। ई हमार खुशी। एह पर ई बड़का हमें गाली दिया, सरकार, और मारे के कहा।' उधर से बड़का गरजा—'तू' काहे नाही खइब हमरी घरे। हम कवनो डोम चमार हैं।' एक साथ सतुआ बाबा, बिरजू बाबा, औतार बाबा सभी गरजते हैं, 'काहे नाहीं खइब, बोल।' नीचे बैठे लोगों में कुतूहल की लहर दौड़ जाती है। एकाएक किसी का अट्टहास सुनायी पड़ता है और सबकी नजर उधर घूम जाती है। गिरगिटवा हँसते-हँसते लोट-पोट हो रहा है 'डोम, चमार, अरे भाई डोम चमार से अधिका। डोम चमार से अधिका।' हँसता जाता है। बिरजू महाराज डाँटते हैं 'ए गिरगिटवा चुप रहु। तें का बीच में नाचे लगने।' औतार बाबा गिरगिटवा की ओर गौर से देख रहे हैं 'का हो गिरगिट तू जरूर कुछ जानत बाड़। का बाति ह बोलऽ।' गिरगिटवा फिर हँसता है, 'ए बाबा जानत रउरहूं बानीं। काहे नहखीं कहत। बोलीं।' सभी लोग संदिग्ध दृष्टि से औतार बाबा की ओर देखने लगते हैं। उनके चेहरे पर कई रंग आ-जा रहे हैं, किन्तु वे बराबर अपनी धोती में आगे-पीछे झूम रहे हैं। औतार बोलते कम हैं, इसकी जानकारी सबको है, मगर यह मौका तो उन्हीं के बोलने का है। पीछे से एक आवाज आती है, 'बाबा का बोलें। रात कासी उनके पास आधी रात ले बइठल रहलें। सब तय हो गईल। सब गड़प। अब बाबा कुछ नहीं जानते हैं।'

ये मोहन हैं, बिरजू महाराज के भतीजा। पन्दरहवां लगा है और अपने को गांव का सबसे बुद्धिमान मानते हैं। दर्जा छव में पांच बरस से सरका कूट रहे हैं। शादी हो गयी थी जब पहिले पहल गिरधारी मास्टर को दस रुपया पास कराई देकर दरजा पांच पास हुए और छठें में गये। मेहरारू उनसे पांच-सात बरस बड़ी है। एक लड़की भी है मोहन बाबू की, जिसके चेहरे-मोहरे में गांव के लोगों को कभी बिरजू महाराज की, कभी किसी और की छवि दिखाई पड़ती है। बिरजू महाराज गांव के वैद्य, हकीम, ओझा, पंच, भण्डारी, पण्डित, पुरोहित सब हैं, इसलिए मुंह पर कोई कुछ नहीं कहता, लेकिन मोहन बो के नाम के साथ बिरजू बाबा का नाम जोड़कर बूढ़े-जवान सबकी आंखों में चमक आ जाती है। मोहन बाबू का अधिक टेम पड़ोस के कस्बे में कचहरी के मुंशी जी लोगों

के बीच कटता है। वैसे स्कूल में भी उनकी हाजिरी लगती है। एक बार यादवजी मास्टर साहब को छुरा दिखाकर उन्हें फिट कर दिया था, तब से वे कभी इन्हें गैर-हाजिर नहीं लगाते हैं।

दूसरे लोग चुप ही रहते हैं, 'कौन मोहन के गारी सुने जाय। बिरजू महाराज डांटते हैं, 'ऐ मोहन तू कहाँ इहाँ, जाके कस्बा कचहरी देख। जा चुप रह।' डांट का जवाब डांट में देते हुए मोहन बाबू कहते हैं, 'चुप रह तू।' बिरजू का चेहरा लाल हो जाता है मगर चुप रहते हैं। मोहन चालू हो जाते हैं, 'औतार बाबा से पूछ ल काल कासी से केतना लिहलें? का तैं कइलें? बोलत काहे नइखे। कैसे चुप हो गये हैं? घूसखोर कहीं के?' —और इतने तैश में आ जाते हैं कि धम-धम करते हुए चले जाते हैं। सभी लोग राहत की सांस लेते हैं। औतार बाबा के प्रति उड़ती नजर सभी डाल लेते हैं। सतुआ बाबा डपटते हुए कहते हैं, 'कहु रे कसिया चुप काहे बाड़े', काशी फिर हाथ बांध कर कुछ कहना चाहता है। बिरजू महाराज इशारे से बोलने को कहते हैं और वह बोलने लगता है, 'सरकार, हमार नियाव पंच सभे की हाथ में बा।' तब तक कड़कते हैं औतार बाबा, 'अरे ससुर बाति कहु।' न जाने कहाँ से फिर मोहन बाबू का आविर्भाव हो जाता है। वे बोलते ही प्रकट होते हैं 'ऊ क्या बोले? मैं बतावत हूँ? सुनो। चोकट चमार के जानते हैं कि नहीं। उनकी घरे परसों सूअर के गोस्त बनल रहे। समझते हैं कि नहीं समझते हैं। बड़कू और विकरम ई दोनों आदमी दारू के साथ चिखना काट रहे थे। उहे बात इसने देख लिया, मंडवा ने आकर अपने बाप से बोला कि चलो तुमहूँ देख लो। कासी गये और छिप कर वे देख आये, अब बोलो।' इतने में बड़का गरजा, 'ए मोहन बाबू, जब तूं सनीचरी के घरवा में पकड़ाइल रहल आ चमरा कुलि (सब चमार) तोहके धरि के पंचाइति में ले आवत रह लें कुलि, तब हमहीं छोड़वलीं। गिरगिटवा गवाह बा।' इतनी देर बाद गिरगिटवा गला साफ करके बोला, 'इसमें क्या खराबी है। मन्त्री जी बोले हैं कि बाभन के लौण्डों को चमार के घर शादी करने से इनाम मिलेगा। शादी नहीं भी करें तो चमार के लड़के उज्जर होंगे। बुद्धिमान होंगे। एही से हम कुछ नहीं बोला।'

उसका वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि बिरजू महाराज खटिया से उतर कर खड़ाऊँ उठाये दौड़ पड़े, 'कस रे सारे चमार के नसल सुधारने के मोहन वाढ़ें ।' गिरगिटवा कूद कर भागा और पंचाइत में भगदड़ मच गयी । मोहन अलग खड़े होकर सबको ललकारने लगे । बड़का काशी के ऊपर चढ़ बैठा । किसी तरह सब शान्त हुआ । सतुआ बाबा, औतार बाबा, किसनू, गोजर सबके चिरौरी मिन्नत करने पर बिरजू बाबा और मोहन बाबू शान्त हुए । बड़का को बैठाया गया और सबकी निगाहें नये सिरे से उसकी ओर केन्द्रित हुईं । एक साथ कई लोग पूछने लगे, 'कन रे बड़का, तें बैस कुल के होके चमारे की घर में सुअर खइले ह ।' कुछ लोग थू-थू करने लगे । कई बाबा लोग आस्तीन चढ़ाने लगे । राम-राम यह झूठ बात है । तेली पट्टी के लोगों में खलबली मचती है मगर बाबा लोग ज्यादा परेशान दिखायी पड़ते हैं । धीरे-धीरे समझ जाते हैं कि बात उलट कर बाबा लोगों पर ही आ रही है । मोहन बाबू पैतरा बदल कर खड़े हो जाते हैं, 'हाँ, हाँ, ई सब झूठ है । हमने भी इसको सच नहीं माना । असल में मुंडवा साला हम ब्राह्मण लोगों को बदनाम करना चाहता है । हम सब बाबा लोग तो कासी के यहाँ खाते हैं । उसका सीधा लेकर बनाते हैं । काका इसमें क्या दोष है ? और ई मुंडवा कहता है कि कासी के घर नहीं खायेंगे । इसकी ई मजाल । बिरादरी से बाहर कर दो ।' काशी घबड़ा कर इधर-उधर देखता है । तब तक सतुआ बाबा आधे उठ पड़ते हैं—'सवाल इसका नहीं है कि मुंडवा ने काशी को बदनाम किया । सवाल इसका है कि इसने हम पंचन को बदनाम किया । हम लोग कासी के घर खाते हैं और ई सार कहता है कि कासी का बेटा सूअर खाता है । अब विचार करो पंचो । मतलब यह कि सब लोग सुअरखोर के घर खाने वाले हुए ।'

सब बाबा लोगों में जोश भर जाता है । सब काशी और मुंडवा को गाली देने लगते हैं । काशी उठता है और कुछ न सुनने पर अपने बेटे मुंडवा को पीटने लगता है 'इहे मार आग लगवलसि । ऊ चाहे जौन खाय, हमसे मतलब ।' दो-चार हाथ मार-पीटकर ब्राह्मण मण्डली के सामने हाथ जोड़ता है, 'सरकार हमार गलती है, माफी सरकार ।' बाबा लोग फिर बिगड़ते हैं, 'साला माफी माँगता है, बाबा लोगों क ' इज्जत माट

में मिला दिया। माफी माँगता है दण्ड भरो। इसका दण्ड सौ रुपया और विरादी को तीन भात। पक्का भोजन वाभन मण्डली को।' काशी गिड़-गिडाता है, 'सरकार हम लुट जायेंगे। बच्चा है, नादान है। उसने कुछ नहीं देखा है। हमसे बड़ी गलती भई महाराज। हमारा कोल्हू वन्द हैं सरकार। डाँड़ हम कहाँ से देई सरकार।'

'डाँड़ ई देई' की आवाज की ओर सव लोग घूम कर देखते हैं तो मोहन वावू हाथ में एक वैल का पगहा लिये दिखायी पड़ते हैं, 'कसिया के वैल खोल लाया हूँ। रुपया दे। नहीं तो वैल नीलाम होगा। वोलो। एक, दो, तीन।' पंचों की वाछें खिल जाती हैं। विरजू महाराज कहते हैं, 'कौनो मजाक, कचहरी में झुट्ठे थोड़े रहता है मोहन। पुलिस से दोस्ती है। जानता है कौन काम कैसे होता है। दण्ड वसूल करने का तरीका यही है।'

काशी और मुंडवा रोते हैं। उनके घर की औरतें चिल्लाती हुई वैल के पीछे-पीछे आती हैं। फिर एक हंगामा मचता है। किसी की कोई वात सुनायी नहीं देती। वड़का ताल ठोंकता है, 'सार हमको वदनाम करिहैं। दूसरे को वदनाम करने का फल भोगो।'

गिरगिटवा फिर अट्टहास करता है, 'और जुटावें पंचाइत। अव दें डाँड़ नहीं तो वेदखल वैल से।' थोड़ी दूर जाकर कहता है, 'अरे कासी भाई! ई वाभन मण्डली है, जियो तो खायेगी? मरने पर भी खायेगी। भागो।' और जोर से हँसता हुआ चला जाता है। यह गिरगिटवा भी अजव है। चालीस से उमर कम है मगर दाढ़ी मूंछ जटा वढ़ाकर घूमता है। मेहरी चमरटोली में सवसे सुन्दरी थी। पड़ोसी गांव के वावा जी के यहाँ रोज जाती थी सोहनी और रोपनी में। वाद में वावा जी भी आने लगे। एक दिन गिरगिटवा ने वावाजी से कहा, 'महाराज, चमार का दान लेंगे?' वावाजी कुछ नहीं वोले, फिर हँसने लगे, 'हाँ हाँ, गिरगिट भगत, काहे नहीं लेंगे। दो, क्या दे रहे हो?' गिरगिट घर में गया और मेहरिया की वाँह पकड़े वाहर आ गया, वोला, 'महाराज और कुछ तो है नहीं अपके जोग, इहे है। आपके गोवर पानी करेगी। हम अव साधू हो गये।' सारा गांव देखता रह गया। गिरगिटवा गांव छोड़कर न जाने कहाँ चला गया।

दो-तीन बरस बाद जटा-जूट बढ़ाये लौटा तो पड़ोस के गांव के बाबा जी उसकी बीवी के साथ परदेश जा चुके थे। तब से गिरगिटवा गांव के सिवान पर पीपल के नीचे रहता है। जून-कुजून गांव में आकर दो कौर किसी के यहाँ बैठ कर खा लेता है और नारद जी का पेशा करता है। सब जगह गिरगिट भगत मौजूद हैं। शादी-ब्याह, मरन-जीयन से लेकर पंचाइत-त्यौहार तक।

गांव में सूखा पड़े तो गिरगिट भगत खुश होकर घूमते हैं। किसान इनकी अकाल-खुशी से चिढ़ते हैं तो भगत कहते हैं 'हम बोला है भगवान से। मत बरसाओ पानी। गांव में दया-धरम नहीं रह गया। और बेईमानी करो। और चोरी करो। और बाबा लोगों को अपने घर में बुलावें चमाइन लोग और ताड़ी पिलावें। पानी नहीं बरसेगा। हम बोला है।'

जब पानी बरसता है, और कई-कई दिन तक लगातार बरसता है तो गिरगिट भगत कहते घूमते हैं, 'हम बोला है मेघ राजा से और प्रलै करो। अत्याचार हो रहा है है। चमार खटिया से नहीं उतरता है, बाबा को देख कर। बाबा चमार के घर में पीछे से घुसता है। मुसलमान को अण्डा नहीं मिलता। बाबा अण्डा खाता है। दूध में नाला पानी मिलाता है राशन में कंकड़। अब पानी नहीं खुलेगा।'

पंचाइत में सन्नाटा है। काशी का हाथ जोड़ते-जोड़ते बुरा हाल है। मुंडवा कभी रोता है। कभी रोते-रोते बड़का को, कभी अपने अभाग को गाली देता है। कहता है. 'हे भगवान् नियाव करो। पाप का पाप कहने पर हमको उलटा डांड़ लगाते हैं। ई पंचाइत नाहीं रावण का दरबार है।'

मुंडवा की माई, जिसको कभी किसी ने घर के बाहर नहीं देखा, पंचों के सामने आंचल फैलाये भीख मांग रही है, 'पंचों, नियाव करो। मुंडवा के बाप के सिर पहिले ही कर्जा है। बैल चलि जाई तो हमार गांव छूटि जाई। सरकार माई-बाप। दोहाई हो।'

उधर चमारों में हुड़दंग मच गया है। गोबर चमार बोकटा को अंधाधुन्ध गाली दिये जा रहे हैं 'ई सार अपने सुअर खाई। ई तो ठीक। बाबू के धरम काहे बिगाड़ी। बड़का को इसने काहे सुअर खिलाया। चिरकुम

चौधरी को काहे खिलाया। चमरटोली से बाहर करो।'

कुछ चमार चोकट की तारीफ कर रहे हैं, 'अच्छा किया। विकरम कवनों गँवार है। बड़का कौनों बच्चा है। चोकट उन्हें बुलाने गये थे। अरे, वे सब जानते हैं, अब छुआछूत में कुछ नहीं रखा है। हमार लरिका वकालत पढ़ रहा है शहर में। ऊ बताता है कि दिल्ली में जनेऊधारी बाबा लोग सुअर का गोस खाते हैं। इसमें कोई बुराई नहीं। आने दो विकरम चौधरी को।' पीछे से कोई बोलता है, 'ऊ तो पी के पड़े हैं डीहे पर।'

ये विकरम चौधरी मुखिया हुआ करते थे। बाप दलाल थे। पैसा छोड़ गये हैं। जमीदारों की दलाली का। बेटा पी रहा है, कहता है, 'किसी के बाप आ क्या, अपना पीते हैं।' बीवी को सन्तान नहीं है। गाँव में लोग तरह-तरह की बातें कहते हैं 'विक्रम खोजवा हैं। उन्हें मदरवाला हथियारे नाही बा।' कुछ कहते हैं, 'वह तो है मगर वे जब प्राइमरी में पढ़ते थे तो अलगू मुंशी उन ही से मेहरारू का काम लेते थे। ऊहे लत इनको भी लग गयी। बेचारे लड़कों को मिठाई खिलाते हैं। लड़का हो कहाँ से।'

कुछ लोग जो अधिक यथार्थवादी हैं, तार्किक कारण देते हैं। उनका कहना है कि विकरम चौधरी में कोई खराबी नहीं। विकरम बो तो कभी किसी को मना नहीं करतीं। बिरजू बाबा की चेलिन हैं। मूस महरा से बतियाती हैं। कस्बे की ओर भी जाती हैं। तो क्या सभी मर्द खोजवा हैं? जरूर कोई खराबी उन ही में है।

वे बेचारी सब सुनती हैं, सन्तान कामना से कुछ भी करने को तैयार हैं, देवी बरम की मनौती से लेकर बिरजू बाबा की सेवा तक। मगर कोख नहीं फूटती तो वे क्या करें। चौधरी विकरम मस्त हैं। अब सभापति के जमाने में उनकी मुखियाई नहीं चलती। न चले, दारू है और मिठाई पसन्द करनेवाले लड़के तो हैं।

अरे अब न मोहन बाबू बड़े हो गये हैं, मेहरी, लड़की है। विकरम की बड़ी मिठाई खायेग हैं मोहन बाबू। अब तो बुलाने पर दूर से छिटक जाते हैं। जायं। अपनी तो दारू भली।

सो, विकरम चौधरी को कहाँ मालूम कि कैसी पंचाइत हो रही है और उनके नाम पर कौन थूक रहा है। उनकी मेहरारू पंचाइत की भनक

पा जाती है और बीच सभा में आकर हाथ नचाती हुई कहती है, 'कौनो मुंह झौंसा एनकर नांव लेई त ओकर मुंह नोचि ले। अपने सूअर खाओ चाहे डांगर।'

बिरजू महाराज पहिले से ही रिस के मारे हाँफ रहे हैं। बिकरम बो की उपस्थिति से क्रोध में वीर रस भी आकर मिल जाता है। उछल कर ललकारते हैं, 'देखो चौधराइन, ई मुंडवा और कसिया के। हम लोग जिसके घर खाते हैं, वह भला सुअर खायेगा ? ई सब बाभन मण्डली के खिलाफ जाल रचते हैं और बाभन सारे चुप हैं सब। देखो, कइसे धरम-करम का नास हो गया।' उनके नथुने फूल जाते हैं और सतुआ काका उन्हें संभालते हैं।

सतुआ बाबा बच्चों के बाबा हैं और अधेड़ों के काका। आधे लोग उन्हें सतुआ काका कहते हैं और आधे लोग सतुआ बाबा। गाँव में सबसे बड़ी डील और सबसे लम्बी उमर है। सफेद बाल, कभी किसी ने उन्हें कुर्ता या कमीज या बनियान पहने नहीं देखा। एक धोती, आधी कमर में होती, आधी ऊपर। जाड़ा, गरमी, बरसात सतुआ काका की एक ही पोशाक। जाड़े में रजाई लपेट कर और लोग कउढ़ा (अलाव) घेर कर बैठते, सतुआ काका सौ मील प्रति घंटा की रफ्तार से हनुमान चालीसा का पाठ करते हुए कुएँ पर स्नान करते। न काँपना, न सिकुड़ना। नहा-कर एक घंटा पूजा करते और किसी जजमान के यहाँ कुछ न हुआ तो अपने ही घर में भोजन बनाते, जो मिल जाय। वैसे उनके प्रिय भोजन में खिचड़ी या सतुआ का महत्व सबसे अधिक है। इसी सत्तू के चलते उनका अच्छा-खासा नाम बिगड़ गया। माँ-बाप का दिया नाम था गिरधर चरण, तसला भर सतुआ घोलकर पीने के चाव के कारण गाँव के लोगों ने सतुआ काका कहना शुरू कर दिया। उन्हें इस पर कोई ऐतराज भी नहीं क्योंकि सतुआ के साथ उनके पराक्रम की भी अनेक कथायें जुड़ी हुई हैं। एक तसला सतुआ खाकर पचा लेना जैसे उन्हीं के वश का था, वैसे ही दो कोस तक एक सांस में दौड़ जाना भी उन्हीं का काम था।

कहते हैं एक बार गरमी के दिनों में एक गुद्दी चिरई को कई कोस तक दौड़ कर पकड़ लिया था, जवानी के दिनों में। काका बताते हैं,

'हुआ यह बचवा कि मैं आम की रखवाली कर रहा था। एक गुद्दी फुर-फुर करती कपार पर से निकल गयी। हमने कहा तुम्हार ई मजाल ? मैं दौड़ने लगा। सब खेत खाली थे। न कहीं बाग न बगीचा। एकाध पेड़ या झाड़ी। तो जब गुद्दी बैठे, हम ढेला से उड़ा दें और दौड़ें। दो-तीन बार मैदान का चक्कर लगते गुद्दी लड़खड़ाकर गिर पड़ी। लेकिन बचवा हम भी भहरा कर गिर पड़े। मगर पकड़ ही लिया उसे।'

इस प्रकार की पराक्रम गाथायें उनकी अनेक हैं, जिनमें सबसे मजेदार वह है जिसमें रात को पड़ोस के गाँव के धोबी का खस्सी मुँह बाँध कर अकेले पीठ पर लाद कर उठा ले गए थे, सतुआ काका। फिर रातों-रात उसे काट-छाँट कर सीरागोड़ी खेत में गड्ढा खोद कर गाड़ दिया था। रात ही को भूँज-भाँज कर कुछ मांस खा गए, कुछ यारों को दे आए और जब सवेरे पता चला कि बरेठा (धोबी) का बधिया खस्सी तो चरता हुआ घूम रहा है, तो सतुआ काका चकरा गए। चुपके-चुपके खेत में जाकर मिट्टी हटा कर देखा तो वह मूंडी गदहे के बच्चे की थी।

बहुत दिनों तक काका का पता नहीं चला और जब कई बरस के बाद गाँव लौटे तो मांस खाना छोड़ चुके थे। अब तो लहसुन प्याज भी नहीं छूते हैं।

मांस रहा हो या मछली, सतुआ काका ने अपना धरम कभी भरष्ट नहीं होने दिया। काका कहते हैं, 'धरम बचा रहेगा बचवा, तो चोरी घाट करने से और मछरी गोस खाने से नरक नहीं होगा।' काका चोरी नहीं करते। सिर्फ एक बार नानू धुनिया के घर से दो मन जैकेराई से भरी हुई माटी की डेहरी पीठ पर लाद कर अकेले उठा लाए थे। फिर महीनों तक आराम से सतुआ खाते रहे। उनका धरम उनके पास सुरक्षित है। एक बार जब वे भोजन बनाने के लिए चौका दे रहे थे तो उनके घर के सामने से जाती हुई बिकरम वो रुक गयी थी। कुतूहलवश इधर आकर उस जगह खड़ी हो गयी जहाँ से चौके की सीमा रेखा शुरू होती थी। बस क्या था, सतुआ काका चैली लेकर दौड़ पड़े थे। 'कस रे बेसवा, कौनो बिरजुआ के चौका समझ लिया है इसको। अरे, हमार सब तो चला गया। न घर न मेहरी, न जर न जायदाद। ले दे के एक ठो धरम बचा है, इसको भी लै

लेगी।' चौका छूकर चौधराइन खिसियाकर भाग गयी थी।

वैसे गोजर कभी-कभी सतुआ काका से ठिठोली करते हैं और कहते हैं 'सतुआ काका जब चौधराइन पर बिगड़ रहे वोह बाति के कारन हम जानते हैं।' पता नहीं वह बात क्या है कि सतुआ काका इतने पर ही गोजर को गाली से नहला देते हैं और गोजर सुरती बनाते हुए हँसते रहते हैं। फिर गम्भीर हो जाते हैं। सतुआ काका उस समय उठ कर किसी तरफ चल देते हैं।

गोजर भाई उमर में साठ पार कर रहे हैं, मगर सबके भाई हैं और गांव के पन्दरह बरस के जवानों की मेहरारू को भौजी कहने में मजा लेते हैं। नीयत बुरी नहीं है सिर्फ कौतूहलवश ऐसा करते हैं। वैसे उनकी पट्टी में उनकी पतोहू में दस आना हक माँगने वाला कहा जाता है। कहते हैं कि सात बरस की उमर में अपने बेटे बदरिया का व्याह उन्होंने उसके लिए नहीं अपने लिए कर लिया था। बदरिया भाग गया सिलीगुड़ी और समझदार हुआ तो आकर मेहरारू को भी ले गया। तब से कभी नहीं लौटा। गोजर भाई का काम अब अड़ोस-पड़ोस में मुंह मारकर ही चलता है। गोजर गांव में सबसे मजाक करते हैं। सबको कुछ न कुछ कह कर चिढ़ाते रहते हैं। बच्चे-बूढ़े सबकी चुटकी लेते रहते हैं। उनकी चुटकी से बचना हो तो उनकी बहनवाला प्रसंग उठा कर लोग उन्हें चुप कराते हैं।

गांव में कहा जाता है कि उनकी जवान बहन मरछिया को उनके बाप ने मऊ ले जाकर पांच सौ रुपयों में बेच दिया था। वैसे गोजर भाई कहते हैं कि उनकी बहन कोई थी ही नहीं। यह जरूर है कि बहन का अस्तित्व स्वीकार न करने पर भी सबको चिढ़ाने वाली उनकी जबान रुक जाती है और भरसक उठ कर चल देते हैं।

बैल का पगहा पकड़े-पकड़े अब मोहन बाबू थक गए हैं। उनका पारा चढ़ता जा रहा है। उधर काशी और मुंडवा की माई का रोना जारी है। बिरजू बाबा हाँफ रहे हैं और औतार बाबा अपने धोती के झूले में झूल रहे हैं। वे जैसे गहरे में डूबकर कोई निर्णय का रतन निकालना

चाहते हैं। इसीलिए वाहर के शोर से अलग हैं। यहाँ लोग एक-दूसरे पर आरोप लगा रहे हैं और औतार बावा को मन-ही-मन डर लग रहा है कि कोई मनचला इसी बीच कहीं उनके घरमू के बीच वाली कथा न उधेड़ दे।

न्यायमूर्ति औतार बावा की कमजोरी उनके भाई घरमू की करतूत है। घरमू तब गवरू जवान थे। औतार और घरमू की एक ही बहन थी, जिसको बदले में देकर औतार बावा का बियाह हो गया था। छोटे घरमू जब जवान हुए तो औतार बावा को रोज गाली देते कि साले ने अपना स्वारथ तो देख लिया, हमारे लिए क्या करना है? औतार बावा चाहते तो बहुत थे कि घरमू की पीठ में हल्दी लग जाय लेकिन कोई बांभन चढ़े तब न। पैतृक जायदाद थी नहीं और कोई हीला भी नहीं था। जजमानी भी कोई खास नहीं, जिससे जीविका चले। कई बार कर्ज-वर्ज लेकर लड़की खरीदने का डौल लगाया लेकिन वह भी नहीं लगा। एक बार चार सौ रुपये में एक बहू मिली भी तो उसका आना सबने देखा, जाना कोई नहीं देख सका। बाद में बात खुली कि वह कोई नचनिया था, जो औरत बनकर रुपया ठगने आया था। उसके साथी रुपये लेकर चले गए रात को घरमू बावा के सुहाग सेज पर जाने से पहले ही बाहर-भीतर जाने के बहाने वह औरत बना नचनियाँ भाग गया। तब से घरमू और उग्र हो गए, जिसकी चरम परिणति हुई मुहम्मेद जुलाहे की मटी के साथ उनके भाग जाने में।

वर्षों बाद कलकत्ता में घरमू अपनी बीवी के साथ गांव के जूट मिल मजदूरों से मिले थे तो उनसे संदेश भेजा था कि अगर पंच लोग हुकुम दें तो हम लोग गांव आकर रहें। इसकी चरचा गांव में तो खूब हुई मगर औतार बावा के सामने कहने की हिम्मत किसी की नहीं हुई। औतार बावा की पंचाइत चलती रही। घरमू का नाम उनके सामने लोग बचा-बचा कर जबान पर लाते हैं।

इस समय जब सबका कच्चा चिट्ठा खोलने को सब लोग तैयार हो गए हैं तो क्या पता कोई कही दे। औतार बावा चुपचाप आगे-पीछे हिलते जाते हैं। मगर चिन्ता उनके चेहरे पर बराबर खेल रही है। मोहन सबके

सामने कह चुके हैं कि रात कासी औतार बाबा के पास देर तक बैठे थे। कहीं ऐसा न हो कि कसिया पोल शायद खोल दे। लेकिन औतार बाबा का चेला है, कच्चा नहीं हो सकता। डांड भले दे दे। बात नहीं खोलेगा। वैसे मन-ही-मन औतार बाबा तरकीब सोचते जा रहे हैं कि कासी को डांड से कैसे बचायें। अब तो यह उनकी इज्जत का सवाल है।

एकाएक चमत्कार-सा हुआ। रोता-गिड़गिड़ाता कासी मुंडवा के गले पर चढ़ बैठा। दबोचते हुए बोला, 'मांग सारे, माफी मांग। सब पंचन से। नाही त गांव छोड़े के परी। मांग माफी।'

मुंडवा बाप के चंगुल से छूट कर औतार बाबा का पैर पकड़ कर बैठ गया और गिड़गिड़ाने लगा। औतार बाबा को रास्ता मिल गया। स्वयं कातर स्वर में कहने लगे, 'पंचो, कासी बेचारा गऊ आदमी है। मुंडवा के कहने में आकर बेचारे ने मंगल भाई के यहां खाने से इनकार कर दिया। अब भरी सभा में कान पकड़ता है। हमारा ख्याल है, उसे माफी दे दी जाय।'

औतार बाबा जैसे खुद ही अपराधी हों। मोहन, बिरजू और सतुआ बाबा की हुंकार शब्द का रूप ले उससे पहले ही सबकी नजरें सामने घूम गयीं और सबकी जबान बन्द हो गयी।

सामने से थानेवाला सिपाही आता दिखायी पड़ गया। सब अपनी-अपनी जगह पर मौन रह गए। सिपाही सहज भाव से औतार बाबा वाली खटिया की ओर बढ़ कर उस पर बैठ गया। थोड़ी देर इधर-उधर देखता हुआ चुप रहा, फिर पूछने लगा, 'का हो पण्डित जी। ई कैसा जमावड़ा है भाई? मोहन बाबू किसका बैल है? कांजी हौस ले जा रहे हो क्या?' मोहन बाबू कुछ बोले उससे पहले ही मुंडवा की माई और कासी रोने लगे।

सिपाही जी कुछ मामला सूंघते हुए सिर हिलाने लगे।

बाबा जी लोगों की व्यग्रता बढ़ गयी। आंखों ही आंखों में बात होने लगी। अब क्या किया जाय? ई जम का दूत आ टपका। कच्च आध डांड़ तो ए ही के चाही। नहीं तो दरोगा जी को बुला लेगा और गुड़-गोबर ही समझो।

सतुआ बाबा, औतार बाबा, बिरजू बाबा, गोजर भाई और किसनू सब एक-दूसरे की आँखों में यही सब कहते रहे और भीतर-ही-भीतर डरते रहे।

सिपाही सबको तौलता हुआ चुपचाप कितने का केस है, समझने की कोशिश कर रहा था।

मोहन बाबू से बैल का पगहा न पकड़ते बनता था, न छोड़ते। सिपाही से उनकी जान-पहचान तो थी लेकिन सामने परसी थाली को साधारण जान-पहचान के नाम छोड़ने वाला सिपाही वह न था। यह मोहन बाबू जानते थे।

पिछले साल दीवाली की रात यही सिपाही आया था, जिसने जुआ खेलने वाले सारे अड्डों पर जा कर सब जमा-जथा वसूल लिया था। मोहन बाबू ने जब जान-पहचान का हवाला दिया तो उसने कहा था कि थाने में नहीं ले चल रहे हैं, यही क्या कम एहसान कर रहे हैं। अब मोहन बाबू सकते में। अकेले मुंडवा उत्साहित दिखाई देता है। वह बार-बार कुछ कहना चाहता है कि सिपाही उसकी ओर देखे और वह चालू हो जाय। अन्त में सिपाही जी से उसकी नजरें मिलीं। जितनी जल्दी हो सका उसने अपने को बेगुनाह और बड़कू-बिकरम को गुनाहगार साबित करने के लिए कुछ कहना शुरू किया जो किसी की समझ में नहीं आया।

सिपाही जी बिकरम के नाम पर कुछ उत्साहित हुए तब तक फिर दृश्य बदल गया।

आँखों पर कोल्हू के बैल की तरह काला चश्मा चढ़ाए मूस चमार का लड़का आकर खड़ा हो गया। अभी-अभी शहर से आया था और पंचाइत हो रही है, सुन कर सीधे चला आया। क्या पंचाइत है। कौन अभियुक्त है। क्या अभियोग है। सिपाही यहाँ क्यों है। मोहन बैल लेकर क्यों खड़े हैं—इन सब प्रश्नों का उत्तर उसने चश्मा उतार कर एक ही नजर में पा लेने की नीयत से सबकी ओर देखा। वह कुछ समझता इससे पहले ही मूस महरा आगे बढ़ आए, 'चलो बचवा, कुछ खाओ-पीओ। यहाँ का धरा है।'

बचवा ने बाप को झिड़का, 'चलते हैं, जरा पंचायत देख लें। क्यों

सिपाही, जी क्या मामला है ?'

दरोगा के अलावा बाकी सबको डाँटने का अभ्यस्त सिपाही इस तरह के सवाल के लिए तैयार नहीं था। झल्लाकर बोला, 'हम भी तो यही पूछ रहे हैं साहब ! यहाँ कोई कुछ बतावे तब न ? मालूम होता है सबको थाने ले चलना पड़ेगा ?'

बस ताव खा गया वकालत पढ़नेवाला लड़का, 'कौन हो जी तुम सबको थाने ले जाने वाले ? क्या किया है इन लोगों ने ? गाँव का मामला है, गाँव में तय होगा। भागो।'

आधे लोग तो सूख ही गए। पता नहीं अब सिपाही क्या करे। मगर मोहन बाबू भौंहों में हँसे। सिपाही तमतमाया हुआ उठा और कहता हुआ चला गया, 'अच्छा देखते हैं थाने चलकर। ई सुराज क्या हुआ, पुलिस की इज्जत चली गयी। लोगों की ई मजाल कि हमसे जबान लड़ावें।' बकता-झकता सिपाही चला गया। इधर भीड़ का हीरो हो गया, वकालत पढ़नेवाला मूस चमार का लौण्डा हरखू उर्फ हरख-नारायण मौर्य, बी० ए०, एल-एल० बी० द्वितीय वर्ष।

मूस ने नाम दिया था हरखू लेकिन हाईस्कूल पास करने के बाद अखबार में छपवाकर हरखू ने अपना नाम रख लिया हर्षनारायण मौर्य। मुंशी गोबन कहते थे कि मौर्य ही चमारों का सरनेम है। चन्द्रगुप्त मौर्य के वंशज हैं हम लोग। दरअसल तो क्षत्रियों के बराबर हमारा दर्जा है। सभी चमारों का दर्जा क्षत्रियों के बराबर हो चाहे नहीं, हरखू उर्फ हर्षनारायण मौर्य अपने को सभी कुलीनों से उच्च मानता है। चमार कुल में जन्म पाना सौभाग्य का सूचक है, क्योंकि वह शुरू से देखता आया है कि खाने को दोनों जून रोटी नहीं है, तब भी बाबाजी के लड़कों की फीस माफ नहीं होती और उसको वजीफा मिलता रहा। उसने उसी से अपनी बी० ए० की पढ़ाई पूरी की। मूस की मदद भी करता रहा। वह पढ़ता है तभी से कमाऊ पूत है। बाभन भाई लोग कापी-किताब-फीस की कमी से आठवें-नवें-दसवें दरजे के बाद थक कर कचहरी में मुंशी हो गये हैं या गाँव में जुआ खेलते घूम रहे हैं। हरखू ने एक नया मुहावरा गढ़ लिया है 'चमारों के पेशे को ये बाभन साले गाली मानते रहे हैं। का चोरी-

चमारी करते रहते हो।' इसके जवाब में अब हरखू जब किसी को गाली देते हैं तो कहते हैं, 'का वभनई करते हो जी ?'

हरखनारायण इन बांभनों की औकात खूब जानता है। एल-एल० बी० में नाम लिखाने के साल उनके क्षेत्र में बाबू जी आये थे। बाबू यानि बाबू मनबोधन राम। वह डाकबंगले पर उनसे मिलने गया था और देख चुका है कि कैसे बड़े-बड़े पंडित लोग उनकी जूठी प्लेटें उठाने को तरसते थे। कलक्टर साहब से लेकर क्षेत्र के सभी एम० पी० मिश्र जी और ठेकेदार सुकुल जी तक। लगता था बाबूजी का थूक हाथ पर ले लेंगे। तब हरखनारायण को अपनी जाति पर गर्व हुआ था। ऐसे ऊँचे-ऊँचे लोगों को देख चुका है वह। इस गांव के टुटपुंजिया बाभनों को वह खूब जानता है, समझता है। दो-दो आने पर सत्यनारायण की कथा बांचने के लिए झगड़ा करेंगे और आठ आना पैसा पा जाने पर ताड़ीखाने में जाकर भीड़ लगायेंगे। वह एक-एक को जानता है कि कौन उसकी चमारटोली में किसके घर किस रास्ते से जाता है। लेकिन वह इसका विरोध नहीं करता। चमारों की नस्ल बदलनी चाहिए। और यह ऐसे ही बदलेगी। वैसे हरखू की आखिरी इच्छा है किसी बाभन की बेटी से शादी करने की, और अगर गांव में हो जाय तो अति उत्तम। लेकिन गांव के मूरखों के बीच अपनी आकांक्षा कभी जबान पर वह नहीं लाएगा। वकालत चल निकले तब सोचा जाएगा। इसीलिए पांच बरस की उमर में जो विवाह उसका हुआ है, उसको वह भूल चुका है। कभी कोई नाम लेता है तो बिगड़ खड़ा होता है। कहता है 'जब कमाने लगेंगे तब अपनी मरजी से शादी करेंगे।' बेचारे मूस की बड़ी फजीहत है। अब तो उसने समधी को मनामुनू कर अपनी लड़की को दूसरे के साथ बैठाने को राजी कर लिया है। लेकिन इस बात पर हरखुआ से वह मन-ही-मन रुष्ट है। जो भी हो, खैर बेटा सपूत उसी का है सारे गांव में। वकालत पढ़ रहा है।

सिपाही के पूंछ दबा कर भाग जाने और हरखू के साहस से सारी पंचायत आतंक मिश्रित आनन्द से भर उठी है। आज पहली बार सतुआ बाबा, औतार बाबा, बिरजू बाबा सब लोग एक स्तर से हरखू की विद्या-बुद्धि की प्रशंसा कर रहे हैं। मोहन बाबू पहले तो प्रशंसा और फिर ईर्ष्या

से हरखू की ओर देख कर मुँह फेर लेते हैं।

चमरटोली के उत्साह की सीमा नहीं। चोकट अलवत्ता सकते में है, पता नहीं क्या हो ? मुंडवा हरखू के बराबर खड़ा है और बड़का सिट-पिटा कर मंगल की बगल में आ गया है। धीरे-धीरे हरखू सारी बात जानने की कोशिश कर रहा है लेकिन उसको एक साथ सभी लोग आगे बढ़कर सब कुछ बता देना चाहते हैं। जिससे वह कोई बात नहीं सुन-समझ पाता है।

एकाएक मोटर का भोंपा सुनायी पड़ता है। सभी पुलिस के डर से सहम कर उधर देखते हैं तो एक साथ हँस पड़ते हैं, अरे ई तो बरफवाला है। लाओ भाई, लाओ। कस्बे से बरफ की मिठाई एक काठ के बक्से में भर कर एक आदमी लाता है और शाम तक खाली करके अपना बोरा अनाज से भर कर वापस लौट जाता है। आज वह फुलौने भी लाया है। रंग-बिरंगे फुलौने और बरफ की मिठाई वाले को देख कर बच्चे और जवान एक साथ उधर दौड़ पड़ते हैं। खटिया पर बैठे बूढ़े और अधेड़ बैठे रह जाते हैं लेकिन आँखें उनकी भी उसी तरफ लगी हैं। कुछ छोटे बच्चे फुलौने और मिठाई के लिए पीछे से चिल्लाने लगते हैं। हरखू देखता है और डाँटता हुआ-सा बरफवाले को इधर आने को कहता है। बरफवाला बच्चों को किनारे करता, रास्ता बनाता हुआ आता है और सलाम करके पूछता है, 'हुकुम सरकार।' पता नहीं हरखू इस सलाम पर कि इस संबो-धन पर इतना खुश हो जाता है कि जेब से दो रुपये निकाल कर उसे पकड़ाता हुआ कहता है, 'लो भाई, तुम्हारी मिठाई एक रुपये की होगी और गुब्बारे चार-छः आने के। तुम दो रुपये लो और सब मिठाई और गुब्बारे बच्चों को बाँट दो।' बरफवाला संकोच करता है। हरखू समझाते हैं, 'अरे भाई, ठीक है कि इतने ही में तुम अनाज से बोरा भर लेते, लेकिन रुपये ले जाओ और अभी फिर बरफ ले आओ, शाम तक दूसरे गाँव में बोरा भी भर जायेगा।' बरफवाला व्यापार के इस नये उपाय से चमत्कृत हो जाता है। जल्दी-जल्दी रुपये रख कर मिठाई गुब्बारे बाँटने लगता है। गाँववाले हरखू की बुद्धि के साथ उसकी दरियादिली के कायल हो जाते हैं। अब सबके चेहरे पर हरखू के लिए प्रशंसा और वाहवाही का रंग देखते ही

कर हँसने की क्या जरूरत । लेकिन हरखू है कि हँसता जा रहा है । मिक्की बेचारी ठक् खड़ी है । यह हरखू उसका गुब्बारा लौटा दे तो वह चली जाय । हरखू शान्त हुआ और उसने मिक्की से पुचकार कर पूछा कि यह गुब्बारा उसे किसने दिया । मिक्की ने बताया कि पापा लाते हैं । हमारे घर में तो ऐसा गुब्बारा एक बक्सा रखा है । यह गुब्बारा फूटता नहीं है । रंगीनवाले फुलौने तो जरा देर में फूट जाते हैं ।

हरखू के चेहरे पर शैतानी उभरती जा रही है । मिक्की को मुट्ठी में भर कर पैसा दिखाता है और कहता है कि हमारे लिए ऐसे ढेर सारे गुब्बारे ला दो तो तुम्हें ये सब पैसे दे दूंगा ।

मिक्की प्रसन्न हो गयी है । दौड़ी-दौड़ी जाकर दोनों हाथों में ढेर से रंगीन कागजों की पुड़िया उठा लायी है । हाँफते हुए उससे कहती है कि इसी में है खोलो तो निकलेगा । पैसे पाकर वह चली जाती है और हरखू पंचायत भूल कर इस नये तमाशे में खो जाता है ।

बाबा लोग और पंच लोग अब इस तमाशे से ऊबने लगे हैं । उधर हरखू पर फिर हँसी का दौरा पड़ गया है । कागज की डिबिया फाड़ कर वह लम्बे-लम्बे गुब्बारे निकालता है और फुला-फुला कर हँसता जाता है । किसी की समझ में कुछ नहीं आता । हरखू गौर से मोहन बाबू की ओर देखता है । उनके पास जाकर धीरे से बोलता है, 'का हो गुरु तुम हूँ नाही जानते हो यह क्या है ?' मोहन का चेहरा लाल हो जाता है, फिर शरमा कर वे कहते हैं कि 'हम क्या जानें ?' मगर हरखू छोड़नेवाला नहीं, कहता है, 'भाई हमने तो आपको खरीदते देखा है ।' अब मोहन बाबू याचना-भरी दृष्टि से हरखू की ओर देखने लगते हैं । तब तक बिरजू बाबा फिर बिगड़ उठे, 'ए हरखुआ, अब मोहन बाबू को काहे परेशान करता है, चल हठ यहाँ से ।'

मोहन बाबू बैल का पगहा पकड़े रोने-रोने को हो गये हैं । हरखू वहाँ से हट कर बीच में आ जाता है और सबको दिखा कर बोलता है 'आप लोग जानते हैं, यह क्या है ?' यह निरोध है (भारत सरकार ने अब सचमुच ही रंग-बिरंगे 'निरोध' बनाने का फैसला किया है) निरोध ।' एक साथ आवाजें उठती हैं, 'यह क्या है भाई ?'

हरखू फिर हँसता है किन्तु जल्दी ही गंभीर होकर बोलता है, 'यह परिवार नियोजन है। यह देश का भविष्य है। यह मुन्नर मिसिर जी का डिपार्टमेंट है। मिलता है गांव में मुफ्त बाँटने को और वे खिलौना बनाकर बेचते हैं।'

बहुत देर से मूस लड़के की बकबक सुन रहे थे। वह बढ़कर उसके बराबर खड़े हो गये और डपटते हुए से बोले, 'ई का तमाशा लगा दिय है।' हरखू शायद निरोध के प्रयोग या गुण-दोष बताता मगर सामने बाप को देख कर सकुचा गया। धीरे-से सब समेट कर जेब में रखता हुआ मोहन बाबू की ओर आँख दबाकर बोला, 'अच्छा फिर बतायेंगे। हाँ, अब पंचाइत हो जाय साहब।'

इतनी देर में जैसे मुंडवा की माई और काशी भी अपना दुःख भूल गये थे। अब याद आया तो फिर गिड़गिड़ाने लगे, 'सरकार, माफी दे दिया जाय। सरकार, मुंडवा कुछ नहीं देखा सरकार। हम लोग मंगल के इहां खाये के तैयार हैं सरकार।'

एक बार लगा कि अब पंचों का दिल पसीजेगा। तभी गरजे सतुआ बाबा और बिरजू बाबा, एक साथ ही, 'अरे अब ई सवाल मंगल के और तुम्हारे बीच का सवाल थोड़े रहा। अब यह सवाल तोहरे और बाभन मण्डली के बीच का सवाल हो गया। अब कौन पंच के हिम्मत है कि तोहके माफी देई।'

औतार बाबा कुछ बोलने को होकर रह गये। काशी की घिग्घी बँध गयी। मुंडवा फिर रोने लगा। उसकी माई फिर आँचल फैलाने लगी। मोहन बाबू बड़का के कान में खुसुर-पुसुर करने लगे।

हरखू अब तक सारा मामला समझ चुका था और अब तक उसकी धाक भी जम चुकी थी। अब हरखू ने इस मामले को अपने ढंग से लिया। मोहन बाबू को आँख मारकर उठ खड़ा हुआ। कहने लगा, 'सतुआ बाबा और बिरजू बाबा ! आप लोग जानते हैं कि गांव में पारटीबाजी चल रही है। औतार बाबा को चुनाव में मंगल और बड़का ने वोट नहीं दिया। इसीलिए औतार बाबा ने मुंडवा और काशी को चढ़ाकर यह तमाशा खड़ा किया है।

सुअर खाना मुसलमानों में हराम है। हिन्दू के लिए हराम नहीं है। गोंड़ भी खाते हैं और जंगली सुअर बाबा ठाकुर भी खाते हैं। इसमें कौन बुराई है ? मैंने तो शहर में देखा है डिब्बे में बंद सुअर का मांस बाबा दई सब खाते हैं। ई साला गांव में हमारी बिरादरी को बदनाम किया जाता है कि चमार डांगर खाते हैं, सुअर खाते हैं और गोबरहा खाते हैं। पहले खाते होंगे। अब तो डांगर और गोबरहा नहीं खाते हैं। सुअर खाते हैं तो हम अकेले थोड़े ही खाते हैं। जिसका मन हो आकर हमारे साथ खाये। मगर इसके नाम पर पारटीबन्दी नहीं चलेगी! यह मामला बिकरम और बड़कू के सुअर खाने का नहीं है, पारटी का मामला है, वोट का मामला है। काशी पंच नहीं हुए, औतार बाबा सभापति नहीं हुए उसी का बदला ले रहे हैं।'

औतार बाबा और काशी के अवाक् चेहरों को छोड़कर बाकी सब इस नये ज्ञान से चमत्कृत हो रहे हैं। सबके सिर धीरे-धीरे समर्थन में हिलने लगे हैं। हरखू और उत्तेजित हुआ है। मोहन बाबू प्रफुल्लचित्त विजय गर्व से सबको देखने लगे हैं।

सब अनुभव करने लगे हैं कि यह मामला बहुत संगीन है। इसमें माफी-दया की कोई गुंजाइश नहीं। अब काशी भी हिम्मत हार गया है। लड़के की जरा-सी नादानी से क्या से क्या हो गया। अब इसमें पारटी कहाँ से आ गयी। लेकिन बोलने की हिम्मत उसकी अब नहीं रही। मुंडवा की माई कुछ न समझ कर और जोर से रोने लगी। सतुआ काका की डांट सुन कर वह चुप हुई।

सतुआ काका ने कहा, 'अब ई मामला गंभीर हो गया है। अब कस्बा से मुख्तार साहब का आना जरूरी हो गया है। वे ही आकर दूध का दूध और पानी का पानी करेंगे। उनसे मामला साफ होगा।'

किसी की हिम्मत कुछ कहने की नहीं पड़ रही है। सब सतुआ काका के इस निर्णय को मौन स्वीकृति दे रहे लगते हैं। हरखू भी सिर हिलाता है। काशी और औतार बाबा दिल में ही कांप जाते हैं, न जाने अब क्या होगा। मुख्तारवा एक बदमाश है। लेकिन हरखू सतुआ काका के हुकुम पर मोहन बाबू के घर से साइकिल ले के कस्बा जाते हैं। मुख्तार साहब

को बुलाने पर काम बनेगा। तब तक सभी लोग बैठ कर उनकी राह देखेंगे। दस मिनट का रास्ता है, अभी आते हैं।

मुख्तार साहब कस्बे के तहसीलदार की कचहरी में मुख्तारगीरी करते हैं। मगर उनका मन लगता है गाँवों में ही। इसका कारण बताते हुए कुछ लोग तो यह कहते हैं कि किसी-न-किसी दिन कचहरी में उनकी बोहनी भी नहीं होती। तरकारी का पैसा भी नहीं मिलता। गाँवों में मुफ्त की तरकारी, दातौन और कभी-कभी गन्ने का रस या गन्ना कम-से-कम यह सब तो मुफ्त में मिलता रहता है। सुबह चार सेर वाला लोटा लेकर कान पर जनेऊ चढ़ाये किसी भी गाँव की ओर निकल जाते हैं। मुख्तार साहब रास्ते में फारिग होते हैं और गाँव के चौधरी, मुखिया या किसी मोटे आसामी के दरवाजे पर बैठकर दातुन करते रहते हैं। गाँव के एकाध लड़के आस-पास जमा हो जाते हैं और कभी हँसी-मजाक तो कभी राय-मशविरा चलता रहता है। इसी बीच जैसा मौका रहा, नाश्ते जलपान का कुछ प्रबन्ध हो जाता है। फलरस, गुड़ का रस, गुड़-भूजा, कुछ नहीं तो चार कच्ची मूली। अब तो गाँव में किसी-किसी के यहाँ चाय भी मिलने लगी है। जलपान करके कुछ तरकारी या गन्ना या दातुन लिये कस्बे की ओर लौटते हैं। भरसक कोशिश करते हैं कि लौटते हुए कस्बे तक जाने वाला कोई निठल्ला मिल जाय तो उसे कुछ मामले-मुकदमे की ट्रेनिंग देते चलें। इस तरह की ट्रेनिंग देकर ही एकाध मुकदमा अपने लिए मुख्तार साहब जुटाते रहते हैं।

कचहरी में दिन भर मुवक्किलों से बकझक कर सुरती फाँकते हैं और शाम को आधी शताब्दी पहले का काला कोट, जो अब कई रंगों का हो चुका है, उतार कर बाँह पर रख लेते हैं। घर पर उसे रख कर फिर लोटा उठा कर किसी गाँव की ओर चल देते हैं। इधर-उधर से घूम-फिर कर और कभी-कभी किसी के यहाँ से भोजन करके ही लौटते हैं। हाथ में कभी मुख्तारनी के लिए गन्ना, कभी साग-भाजी तो कभी दही-सत्तू कुछ-न-कुछ होता ही है।

इस प्रकार आस-पास की जनता से मुख्तार साहब का सम्पर्क बराबर बना रहता है। अक्सर उन्हें पंचायतों से निमंत्रण मिलता रहता है।

पंचायत करने में उन्हें कई फायदे हैं। एक तो आज भी गांव की पंचायतों में डांड़ लगाने की प्रथा पुराने जमाने की तरह ज्यों की त्यों है। अदालती पंचायत है। कचहरी है। गांव की पंचायत भी है और उसके सदस्य सभापति भी हैं। मगर ज्यादातर गांवों के मसले उन्हीं मोटे महाजन, पुरोहित, ओझा या धनाढ्य बाबाजी लोगों द्वारा ही तय होते हैं। नये पंच कुछ तो ऐसे हैं, जिनको पंचायत करने की फुरसत ही नहीं। वे कचहरी के दलाल हैं या मुन्शी हैं या मुन्शी के मुन्शी हैं। पटवारी के मुन्शी हैं या प्राइमरी पाठशाला के मास्टर जी हैं। कुछ ऐसे हैं जिन्हें फुरसत तो है लेकिन उनकी बात ही मानने को गांव में कोई तैयार नहीं। बिना किसी मोटे बाबा की बात की मुहर लगे पंचाइत नहीं हो सकती। सो, पंचाइत करने वाले पुराने लोग हैं। उनकी व्यवस्था भी अपनी है।

मुख्तार साहब के बाप जमींदार के दलाल थे। लोग कहते हैं कि अगर उनके खेत से होकर भी कोई आदमी गुजर जाय तो उससे भी दस-पांच रुपये डांड़ वसूल कर लेते थे। दलाली पुलिस की भी करते थे। दारोगा-दीवान को भी दही-घी-मुरगी, बकरी खिलाते रहते थे। इसलिए उनकी दण्ड-व्यवस्था की अपील भी कहीं नहीं होती थी।

आज भी गांवों के छोटे-मोटे मामलों में सतुआ काका, औतार बाबा जैसे मनु-पराशर सौ-पचास का दण्ड अपराधी के सिर लगाते हैं। यह सारा धन वे आपस में बांट लेते हैं। कभी बांटा-चूटी में फरक पड़ा तो गांव वाले जानते हैं, नहीं तो इसे कोई नहीं जान पाता। न्याय मांगने वाले को इतने से संतोष हो जाता है कि चलो अपराधी को दण्ड मिल गया। भले वह बाबा लोगों के पेट में गया हो।

मुख्तार साहब जिस पंचायत में पहुंच जाएं उसमें अगर दण्ड सौ रुपये लगने की संभावना हो तो उनका पहला काम होता उसे दो सौ कराना। डेढ़ सौ स्वयं पचाकर बाकी बाबाजी लोगों को, दो-चार चौकीदार को और कभी-कभी दस-पांच दरोगा जी को भी चटाकर न्याय का झंडा फहरा देने में मुख्तार साहब अपने बाप की तरह ही माहिर हैं।

लेकिन पंचायत करने में मुख्तार साहब को रुपये की प्राप्ति से भी बड़ा एक लाभ होता है—दस आदमियों के बीच घण्टों जोर से बोलकर

अपनी बात सुनाने का। अपने को बोलते और दूसरों को चुपचाप सुनते हुए देखना मुख्तार साहब की महत्वाकांक्षा है, जिसको पूरा करने के दो ही अवसर उन्हें मिलते हैं। गांव की पंचायतें और शादी-विवाह की शिष्टाचार सभायें।

तहसीलदार की कचहरी में तो उनकी वाणी कुण्ठित रहती है, किन्तु पंचायतों में धारासार बरसती है। वैसे, महत्वाकांक्षा पूर्ति के लिए सबसे उम्दा सीजन गरमियों का होता है, जब किसी-न-किसी गांव में रोज कोई-न-कोई बारात आती है। शिष्टाचार सभाओं में बुलाए जाने पर या बिना बुलाए मुख्तार साहब जाकर घंटों भाषण देते हैं। अपने भाषणों में वे बारात के एक-एक आदमी से अपना किसी-न-किसी प्रकार का सम्बन्ध जोड़ते हैं। फिर भारतीय संस्कृति और सभ्यता के विविध रूपों पर देर तक प्रकाश डालते रहते हैं। हालांकि संस्कृति को वे संस्कृत से अलग कुछ भी नहीं मानते। सभ्यता की चिड़िया से उनका घोर अपरिचय ही प्रकट होता है। पण्डितों की चोंचबाजी को बलपूर्वक खत्म कराकर वे उठते हैं। अपने बड़े पेट पर हाथ फेरते हुए शुरू करते हैं 'वर महोदय, बारातियों और घरातियों! मुझे यह जानकर बेहद प्रसन्नता हुई कि अमुक गांव से आप लोग बारात लेकर आ रहे हैं। मैं उस गांव में दस वर्ष पहले गया था और बेचू कुरमी के मुकदमे में कमीशन किया था। आपका गांव बहुत अच्छा है और अब तो और भी अच्छा हो गया क्योंकि आप लोग यहां बारात लेकर आ गये हैं। अब हम लोग भी बारात लेकर आपके गांव आयेंगे।'

मुख्तार साहब के इस वाक्य पर घराती लोग खूब तालियां बजाते हैं। सबको शांत करते हुए मुख्तार साहब गंभीर हो जाते हैं और फिर शुरू करते हैं, 'भारतीय संस्कृत में सभ्यता बहुत ऊँचा है। बारात की सभा में संस्कृत और सभ्यता का मेल देखने को मिलता है। घराती वर का स्वागत करते हैं और नचनियां नाच दिखाते हैं। भोजन बहुत अच्छा मिलता है।'

इसी प्रकार की ज्ञानवर्द्धक बातें मुख्तार साहब तब तक कहते रहते हैं जब तक आधे लोग उठकर चले नहीं जाते। कुछ मनचले नचनियों को मुख्तार साहब के पास भेज देते हैं। हारमोनियम की आवाज शुरू हो जाती है। नचनियां अपने चेहरे पर पुते पाउडर को पसीने की धार से

धोना है और अपना असली रंग निखारता हुआ जब मुख्तार साहब के आगे जाकर खड़ा हो जाता है, तब कहीं उनका प्रवचन विराम पर आता।

जिस साल लगन कम होती है, मुख्तार साहब का स्वास्थ्य गिर जाता है। अपने पिछले वर्षों के व्याख्यानों के बारे में वे लड़कों को पैसे देकर उनकी राय सुनते हैं। कुछ स्कूली लड़के मुख्तार साहब से कहते हैं, 'आपने परसाल सुखई नाऊ की लड़की की शादी में जो भाषण दिया था, वैसा तो राधाकृष्णन् भारतीय संस्कृति पर नहीं बोल पाते।'

मुख्तार साहब के स्वास्थ्य में इसी प्रकार की स्मृतियों से कुछ सुधार होता है।

उनके लिए बरसात और जाड़े के दिन कष्टकर होते हैं क्योंकि कोई हिन्दू इन दिनों विवाह नहीं करता और मुसलमानों की शादियों में कम्बख्त शिष्टाचार नहीं होते। ले-देकर इस बाक सीजन के लिए गांवों की पंचायतें रह गयी हैं, जिनमें कुछ अर्थ की प्राप्ति भी होती है और भाषण की महत्वाकांक्षा भी पूरी होती है। पंचायत की सूचना मुख्तार साहब के लिए भादों की शहनाई है।

पंचायत में बैठे लोगों की आशा के अनुरूप ही हरखू के साथ मुख्तार साहब आते दिखायी पड़े। सतुआ बाबा और बिरजू बाबा ने बढ़कर उनकी अगवानी की और लाकर खाट पर बिठाया। पहले कुछ रस-पानी का इन्तजाम हुआ। मुंह पोंछते, डकार लेते मुख्तार साहब खटिया पर विराजमान हुए।

काशी, काशी बो, मुड़बा, चोकट, बड़का, मूस इन सबको तो जैसे सांप सूंघ गया हो। सब चुप। बाबा मण्डली में कुछ उत्साह कुछ अनुत्साह दिखायी पड़ रहा है। मोहन बाबू बैल को खूंटे से बांधकर खटिया मंगा कर कुछ इस निश्चय के साथ बैठ गये, लगते हैं कि अब फैसला करके ही उठेंगे।

हरखू अब उदासीन हो गया लगता है। ओंनार बाबा दुखी हो गये हैं। सतुआ काका और बिरजू महाराज विक्रमादित्य के सभासदों की मुद्रा में मुख्तार साहब को देखने लगते हैं।

मुख्तार साहब सबको बारी-बारी से घूरते हुए कहते हैं, 'मैंने सब केस समझ लिया है। अब गांव में धरम नहीं रहा। संस्कृत पढ़ने को बाबा लोग तैयार नहीं हैं तो धरम कैसे रहेगा। अब चमार-सियार सब बराबर हैं।'

इतने में हरखू उन्हें कड़ी नजर से देखता है जिसे देखकर कुछ अप्र-तिभ होते हैं। फिर सँभल कर मुख्तार साहब आगे बढ़ते हैं, 'लेकिन चमारों की तरक्की से ही देश की तरक्की होगी। धर्म और संस्कृत अब नये हो जायेंगे।'

मुख्तार साहब रुकते हैं। उन्हें लगता है कि विषय छूट रहा है। गला खंखारकर पंचाइत के विषय पर उतार आते हैं, 'यह बात तो गलत है कि मुंडवा और काशी मिलकर किसी बाबाजी की पारटीबाजी के चक्कर में पड़कर बड़का और विकरम को बदनाम करें। इससे सारे ब्राह्मण समाज की बेइज्जती होती है। जिसके यहाँ ब्राह्मण देवता भोजन करें वह सुअर खाता है? भाई यह कहना सरासर अधरम है। काशी को प्रायश्चित करना ही पड़ेगा। अब पंच लोग फैसला करें कि उनको क्या दण्ड दिया जाय जिससे इनका पाप कटे।'

सभा मौन है। काशी मुंडवा की ओर देखकर दांत पीसता है। उसकी मां रोती है। सतुआ काका और बिरजू बाबा मुख्तार साहब के कानों से सटकर खुसफुस करते हैं। औतार बाबा उदास बैठे हैं। थोड़ी देर में मुख्तार साहब फैसला सुनाते हैं, 'काशी को दो सौ रुपये का दण्ड और बिरादरी को भात। बाबा लोगों को पक्की। इससे कम में काम नहीं चल सकता।'

काशी सपरिवार पुक्का फाड़कर रोने लगता है। कुछ लोग उसे चुप कराते हैं। वह गिड़गिड़ाता हुआ कहता है, 'सरकार, हमारे पास एक पइसा नहीं है। ई डांड़ हम कहाँ से देव। हमार मूड़ी काटि लीहल जाय। सरकार, मगर दण्ड न दीहल जाय।'

सजातियों में कुछ उसकी ओर से बोलना चाहते हैं। मगर वे सब मंगल और बड़का के डर से चुप हैं। अब तो पंचाइत भी उन्हीं के साथ है। मोहन बाबू प्रसन्न हो रहे हैं। बैल खोलकर ले आने की मेहनत वसूल

हो जायगी। वे जानते हैं। दो सौ के दण्ड में सौ-डेढ़ सौ मुख्तरवा ले लेगा। तब भी उनके घर बीस-पचीस जाने से कौन रोक सकता है। फिर दो दिन बाद पक्की का भोज मिलेगा। ऐसी की तैसी।

हरखू अब अन्यमनस्क होता जा रहा है। उसके मन में द्वन्द्व है। उसे लग रहा है कि काशी को बेकार सताया जा रहा है। मगर पारटीवाली बात उसकी सहानुभूति का गला घोंट देती है। मन-ही-मन कहता है, 'दें, हमको क्या।'

उधर काशी है कि रोये जा रहा है, कहाँ से दे? तीन खेतों में एक पहले से रेहन है। एक बैल गिर गया। एक ही बचा है। कर्जा ऊपर से बाकी है। सोसाइटी का कर्ज कभी उसके बाप ने लिया था। वह हर साल सूद पर रुपये लेकर उसे भरता है। फिर बैंक का कर्ज उसके ऊपर ज्यों-का-त्यों है। दुहरा सूद हर साल ऊपर से बढ़ता जाता है। मुंडवा को पढ़ाना चाहा था। वह पढ़ाई छोड़कर कौड़ी खेलने लगा। इधर-उधर की बातों में लग गया। अब उसी की बात मानकर उसने मंगल के यहाँ खाने से इनकार किया तो नौबत आ गयी है गांव छोड़ने की। क्या करे, कहाँ जाय।

वह कुछ कहने का साहस बटोर ही रहा था कि मुख्तार साहब बोल उठे, 'एक बात जान लो, काशी। मामला कानून का है। दण्ड तुम्हें देना ही पड़ेगा। इससे कोई छुटकारा नहीं है। हां, रुपये-पैसे की तंगी हो उसका इन्तजाम हो जायेगा।' मुख्तार दूसरी ओर घूमकर कहते हैं, 'औतार बाबा, आप उसको कर्ज दीजियेगा? नहीं तो हवरू मास्टर को बुलाओ। वे तो देंगे।'

मुख्तार की बात पर हरखू को बड़ा ताव आया। इसमें कौन कानून है भाई। कानून तो वह भी दो साल से पढ़ रहा है। कौन कानून बाबा लोगों को यह अधिकार देता है कि वे जब चाहें, जिस गांववाले को पकड़ कर खा जायें। अगर सचमुच यह मामला कचहरी में जाय तो क्या होगा? भीतर-ही-भीतर हर्षनारायण मौर्य का खून खौल रहा है। मन में आता है, वह सबको ललकार दे। लेकिन क्या जरूरत है भाई। लॉ के प्रो० पाण्डेय कहते हैं कि गांव की राजनीति में किसी शरीफ आदमी को

नहीं पढ़ना चाहिए। गांव के अनपढ़ किसान शहर में एक से एक काबिल लोगों को बेचकर खा जायें। फिर यह काशी भी कौन दूध का धोया है। पढ़े-लिखे लोगों की सबसे ज्यादा खिल्ली तो वही उड़ाता है। काशी कहता है कि पढ़-लिखकर नये लौण्डे गांव को भी खराब कर रहे हैं। धोती छोड़कर सिधवाई पहनते हैं और बैल की तरह खड़े-खड़े मूतते हैं। अब साले भुगतें। हरखनारायण सिर्फ तमाशा देखेंगे।

बिना काशी की स्वीकृति के मुख्तार साहब ने ढबरू मास्टर के यहाँ आदमी दौड़ा दिया। ढबरू मास्टर थोड़ी ही देर में आ गये।

ढबरू को देखकर कोई उन्हें मास्टर समझने की गलती कभी नहीं करेगा। मगर असलियत यही है कि वे मास्टर हैं और ऐसे मास्टर जो चाहें तो गांव भर को खरीद लें। यों यह बात मास्टर खुद कभी नहीं कहते। उनकी मास्टराइन ही कहती हैं। मास्टराइन चौड़ी काठी की स्त्री हैं। पति की सम्पत्ति के गर्व की साक्षात् प्रतिमूर्ति। मास्टर बेचारे मुंह अंधेरे खेत पर चले जाते हैं। ग्यारह बजे लौटकर आते हैं। जल्दी-जल्दी दातुन करके एक लोटा पानी बदन पर डालते हुए हनुमान जी से कुछ जोर-जोर से कहते हैं। दौड़ते हुए चौके तक जाकर जल्दी-जल्दी खाना खाते हैं। मारकीन की वही कमीज पहन कर, जिसे उन्होंने नौकरी के पहले साल सिलवाई थी, स्कूल की ओर भागते हैं। बारह बजे तक वो पहुँच जाते हैं स्कूल।

स्कूल में लड़के-लड़कियों का बस्ता-खड़िया देखते हैं। मानीटर से पाकड़ के नीचे चारपाई डलवा कर आराम से लेटकर इमला बोलते हैं। कभी-कभी राम आम खाता है, में 'खाता है' बोलने से पहले ही झपकी आ जाती है। तब लड़के कलम पटरी फेंककर गुली-डंडा उठाकर चल देते हैं। कुछ देर में मास्टर जी की नींद टूटती है, तो फिर लड़कों को सहेज कर कुछ गिनती-पहाड़ा। तब तक समय हो जाता है बाजार जाने का। कल के लिए नकल लिखने को देकर उधर से ही कस्बे चले जाते हैं। कस्बे में एस० डी० आई० साहब के घर ट्यूशन करते हैं। उनकी सब्जी-तरकारी लाते हैं। सात-आठ बजे तक घर लौटते हैं।

ढबरू मास्टर की यह दिनचर्या अनवरत रूप से चलती है। केवल

उस दिन बदलती है, जिस दिन स्कूल में मुआयना होता है। उस दिन मास्टर जी अपनी कमीज को सोडे से फींचकर पहनते हैं। साढ़े नौ बजे स्कूल पहुंचकर पूरे हाते की सफाई करवा डालते हैं। दही, मुर्गी का इंतजाम पहले से रहता है। डिप्टी साहब आते हैं। ठाट से खाना-पीना चलता है। आराम करने के बाद लड़कों द्वारा तकली पर सूत कातने की कला से प्रभावित होकर अपनी प्रशंसा में कविता सुनने के बाद डिप्टी साहब लौट जाते हैं। उस दिन स्कूल में छुट्टी हो जाती है। मास्टर के लिए महीनों की छुट्टी। जब चाहें आयें, जब चाहें न आयें। डिप्टी साहब खुश। ढवरू मास्टर निश्चिंत होकर दो-चार महीने खेती-बारी का कारोबार देखेंगे अब।

ढवरू मास्टर का व्यक्तित्व गांव भर के लिए श्रद्धा, आतंक, आदर और आश्रयदाता का मिला-जुला रूप है। अपनी तनख्वाह और ट्यूशन के पैसे में से कानी-कौड़ी भी खर्च करने को मास्टर अधर्म मानते हैं। दो-चार बीघे खेती है। शरीर में बैल की तरह कूवत है। कमाते-खाते हैं। बाकी अनाज बेचकर बैंक के हवाले करते हैं। घर में पैसा रखने के खतरे से परिचित हैं। खाद भी खरीदने के लिए अनाज से ही प्रबंध करते हैं। गांववालों की तरह नहीं रहते कि कहीं लगान का बकाया है, कहीं खाद का, कहीं बीज का, कहीं पानी का, तो कहीं सोसाइटी का।

गांव में बड़े से बड़ा आदमी भी परेशान है। मास्टर साहब उस परेशानी में सबकी मदद करने को खड़े रहते हैं। कभी किसी को रुपये-पैसे की जरूरत हो। मास्टर साहब की बही पर नाम चढ़वा ले। ले जाय जितने की समाई हो। हिसाब-किताब में मास्टर साहब पक्के हैं। चवन्नी सूद का हिसाब साफ है। 'भाई, सूद के रुपये मूल में से पहले काट लेंगे। यह सिद्धांत की बात है। पोता बेटे से अधिक पियारा होता है, सूद मूल से। सो ले जाओ, बही पर निशान बना दो।' उनमें से पच्चीस गिनकर उनके हाथ पर धर दो।

लेकिन यह सीधा-सादा वाला कर्ज है। अगर किसी को दीवाली की रात में जुआ खेलते समय कर्ज लेने की जरूरत है तो मास्टर साहब दूने पर देंगे। यानी सौ-फीसदी ब्याज। फिर कोई रोजगार — है

रुपये ले, तो एक रुपये हर हफ्ते देना होगा । कर्ज देते समय मूल में से ही ब्याज कटना शुरू हो जाएगा ।

इधर को-आपरेटिव सोसायटी की वजह से मास्टर साहब की महाजनी कुछ नए रूप ले रही है । जून में किसानों पर बैंक से दावे की नोटिस आने लगती है । बैंक तो नौ-फीसदी सूद पर रुपया देता है । सेक्रेटरी सुपरवाइजर कहते हैं, भाई कर्ज लौटा दो । एक हफ्ते में फिर दिला देंगे । लेकिन एक हफ्ते के लिए ही सही रुपये आयें कहां से । गन्ना मिल पर गिरा आयें । परची का भुगतान पता नहीं तीन साल में हो कि चार साल में । तब कहां से दें सोसायटी का कर्जा । ऐसे आड़े वक्त पर मास्टर साहब काम आते हैं । धचक्का पर उनसे हफ्ते-दस दिन के लिए जितना रुपया चाहे लिया जा सकता है । उनसे लेकर बैंक का कर्ज जमा कर दो । एक हफ्ते का दस-फीसदी सूद उन्हें पहले दे दो । चलो साल भर के लिए सोसायटी का झंझट टला ।

इस तरह ढबरू मास्टर सबके भले के लिए खड़े रहते हैं । उनका रुपया डूब जाय कहीं, इसका कोई डर नहीं । उनके पास मास्टराइन के रूप में वह सिपाही है, जो दरोगा का भी मुंह नोंच ले । ढबरू मास्टर की समृद्धि का रहस्य भी सीधा-सादा है । किसी को दावत खिलाकर, चाय पीने की बुरी लत लगाकर बीबी-बच्चों को कपड़े-गहने की फिजूल आदत लगाकर और अपने अच्छा खाने-पहनने के नाम पर रुपया फूंकने की बेवकूफी वे नहीं करते ।

गांव के कुछ मनचले लड़के भले कहते रहें कि मास्टर भर पेट खाना भी नहीं खाता । मरने पर अपने रुपये की भूत बनकर रखवाली करेगा । यह होगा, वह होगा ।

गिरगिटवा पागल है । वह कहता है, धन की तीन गति है—दे दो । नहीं खा-पीकर उड़ा दो । यह भी नहीं तो उसका नास हो जायेगा ।

मास्टर को इन बेवकूफों की बातों से कुछ भी लेना-देना नहीं । वे सबकी नस-नस जानते हैं । ढबरू मास्टर जानते हैं कि गिरगिटवा के पास अगर लक्ष्मी होती तो वह ऐसी बेवकूफी की बात कभी नहीं करता । दरिद्र के पास बेकार का ज्ञान ही तो होता है । वही गिरगिट के पास भी है ।

मास्टर जी वही सँभालते हुए आ गये और आते ही उन्होंने फैसला सुना दिया कि काशी को वे अब कोई कर्ज नहीं देंगे। पहिले से ही उनकी वही में काशी के नाम से कई सौ रुपये बाकी हैं। मूल तो मूल अब सूद भी वह नहीं देता। हाँ, एक सूरत है। अगर वह अपना गोयड़ेवाला पच-कठवा खेत रेहन रख दे तो मास्टर तीन सौ रुपये अभी देने को तैयार हैं।

सुनते ही पंचों की बाँछें खिल जाती हैं। काशी बो दहाड़ मारकर रो पड़ती है। मगर काशी अबकी कुछ नहीं बोलता। चुपचाप अपनी जगह से उठता है। बायें हाथ का अँगूठा आगे बढ़ाकर मास्टर के सामने पागलों की तरह शून्य में ताकते हुए खड़ा हो जाता है। मास्टर चमक जाते हैं। यह क्या ? मुख्तार साहब अपनी जगह से ही कहते हैं, 'हाँ भाई, मान तो रहा है। मास्टर बाबू ! आपकी बात कसिया बेचारा मानता है। दीजिए उसको रुपये। दीजिये।'

मास्टर साहब पता नहीं क्यों कुछ खिन्न हो जाते हैं। फिर जल्दी ही वही में कुछ खोजकर एक जगह काशी के बढ़े हुए अँगूठे में कजरौटा से काजल लगाकर निशान बनवा लेते हैं। उसके सामने तीन सौ रुपये गिनते हैं और उसमें से कुछ गिनकर वापस ले लेते हैं।

हरखू टोकता है—'ऐ हवस्स मास्टर, यह आप क्या करते हैं ? सूद पर तो दे नहीं रहे हैं। खेत पर दे रहे हैं न। तब कैसा रुपया काट रहे हैं ?' मास्टर सहमकर अपनी भूल स्वीकार करते हैं। कुछ कहना चाहते हैं पर रुपये वापस काशी के हाथ पर रख देते हैं।

काशी वैसे ही खड़ा है। उसका हाथ वैसे ही खुला है, बाकी नोट उस पर पड़े हैं। कुछ नीचे उड़ कर गिर रहे हैं। बिरजू महाराज उठते हैं। नोट उठाकर मुख्तार साहब के हाथ पर रखते हैं। काशी अब भी निश्चित खड़ा है। मास्टर साहब कुछ कहना चाहते हैं। मुख्तार साहब उनसे वहीं से कहते हैं—'मास्टर बाबू ! रेहन का कागज तहसील में आकर ले जाइएगा। चाहे काशी को भेज दीजिएगा।' खुद रुपये गिनने में लग जाते हैं। थोड़ी देर बाद धीरे से बिरजू महाराज से फुसफुसा कर कुछ कहते-सुनते हैं। मुख्तार साहब उनके हाथ पर कुछ रखते हैं। दोनों के

पर सहमति-असहमति के भाव आते-जाते हैं। अन्त में मामला तय हो जाता है।

काशी अपनी जगह पर खड़ा है। मुंडवा और उसकी माई रो रही हैं। मंगल और बड़का खुश हैं। मोहन बाबू हरखू से कुछ कह रहे हैं। डबरू मास्टर धीरे-धीरे लौट रहे हैं। औतार बाबा अपराधी बने चुपचाप बैठे हैं।

मुख्तार साहब अब एक मिनट भी बैठना नहीं चाहते। उठने को होते हैं तो किसनू उठने में सहारा देता है। साथ-साथ चलने लगता है। चलते हुए मुख्तार साहब दूर किसी के छप्पर पर आँखों ही आँखों में कुछ खोजते जाते हैं। किसना गोपन भाव से कुछ कहना चाहता है, जिसे मुख्तार साहब सुनना नहीं चाहते।

मुख्तार साहब को गाँव के सिवान तक पहुँचा कर किसना लौटता है तो देखता है, पंचायत ज्यों की त्यों बैठी है। औतार बाबा अब जाकर कुछ बोल रहे हैं। बिरजू बाबा और मोहन बाबू दोनों मिलकर उनसे ऊँचे स्वर में कुछ कह रहे हैं। सबके चेहरे पर एक ही भाव है—चलो देख लेंगे।

काशी वहीं, उसी जगह, वैसे ही खड़ा है। उसकी बगल में मुंडवा हाथों में कुछ रुपये पकड़े खड़ा है।

किसनू तो पहले से ही असन्तुष्ट है। मुख्तार सब माल लेकर चला गया। किसनू को कुछ नहीं मिला। बाभन न सही, पुरानी पंचायत का सदस्य तो वह भी है। दो-चार तो उसको भी मिलना ही चाहिए। लेकिन सब बेईमान हो गये हैं। बिरजू बाबा ने भी अपना हिस्सा ले लिया। किसनू के लिए चुप रह गये। उसे ये लोग भी जानते नहीं हैं। एक-एक को देख लेगा किसनू।

सचमुच किसनू को गाँव के लोग कितना जानते हैं? उसकी कदर तो बाहर ही होती है। गाँव के बाबा लोग कभी उसका सीधा नाम लेकर नहीं बुलाते। शहर में किसनू महाराज से कम कोई नहीं कहता। उसके शरीर का गोरा रंग और चेहरे का आभिजात्य उसे सवर्णों की प्रतिष्ठा

सहज ही दिला देते हैं। इसका ज्ञान किसनू को बाल्यकाल से ही है। इसीलिए जाति का नाई होने पर भी कभी वह हजामत बनाने के घिनौने काम की ओर नहीं झुका। यह काम भाई-भतीजे करते हैं। वह तो पहले जमींदारों के और अब मारवाड़ी सेठों के यहां बैठने की, वहां इज्जत पाने की कला जानता है। अब तो सरदारजी की दूकान में दिन भर पंखे के नीचे बैठा रहता है। एक काम उसने सीख लिया है—हाथ देखने का। किसी का भी हाथ पकड़कर उसके सुनहले भविष्य का सपन रेखाचित्र खींचने लगना उसकी आदत बन गयी है। बड़े शहर में सेठों और सरदारों के यहाँ वह यही तो करता है। चेहरा देखकर वह जान लेता है कि जजमान किस प्रकार के भविष्य का चित्र पसन्द करेगा। सेठ और सरदार व्यापार की बात, उनके मुनीम सट्टे-लाटरी की बात। सबके सपनों में रंग भरना किसुन महाराज का काम है। इससे चाय-पान की आमदनी भी हो जाती है। गांव के अपढ़ गंवारों की घास जैसी दाढ़ी छीलने या हल-कुदाल चलाने की भी मजबूरी नहीं रह जाती।

गांव का कोई नहीं जानता कि किसुन महाराज बड़े शहर में सामुद्रिक शास्त्र के इतने बड़े ज्ञाता हैं। किसुन महाराज जानते हैं कि मूर्ख भले हों, ये गांव के बांभन अगर यह जान जायें कि वह हाथ देखने का पेशा करता है, तो मार कर उसकी कमर तोड़ें। शहर में रोज रहने से इज्जत घटने का अंदेशा न होता तो वह कभी गांव आता ही नहीं।

वैसे जब भी गांव की ओर किसुन जाता है तो दो-चार रुपये के जुगाड़ में ही रहता है। इस बार पहली पंचायत है जब दो सौ रुपये डांड़ में उसे एक पैसा भी नहीं मिला। गुल्तरवा न होता तो कुछ हिसाब बैठता। अच्छा, किसनू भी इस मामले को ऐसे ही नहीं छोड़ेगा।

किसनू की सीझ को तोड़ता है मोहन बाबू का कर्कश स्वर। वे मुंड़वा से कह रहे हैं, 'ले जा रे, अपना बैल। बांध अपने घर ले जाकर।'

मुंड़वा अपने बाप की हालत देख कर कुछ भी समझ नहीं पाता। वह जोर-जोर से रोने लगता है। कुछ लोग काशी और मुंड़वा को समझाने के लिए उठते हैं।

रास्ते पर बड़े जोर का हंगामा उभरता है। एक भीड़ पंचायत की

तरफ चली आ रही है। कुछ लोग दो आदमियों को उठा कर ला रहे हैं। एक आदमी आगे-आगे नाच रहा है। उसी के साथ-साथ झूम रहा है गिर-गिटवा। भीड़ पास आ जाती है। एकाएक बिना किसी से कुछ पूछे और बिना किसी से कुछ बताये लगभग सभी लोग समझ जाते हैं कि क्या मामला है।

यह सब तो आये दिन होता रहता है। यह भीड़ तो कचहरी के मुंशी जी लोगों की है। वे ही लोग इसके नायक हैं। जो दूसरों के कंधों पर हैं, या नाच रहे हैं और हवा में किसी अदृश्य दुश्मन को ललकार रहे हैं। इस समय मुंशी लोग दूसरे घोड़े पर सवार हैं।

कचहरी के मुंशी जी लोगों की संख्या इधर आस-पास के गांवों में दरजनों तक है। पुराने समय के मुंशी झगरू ग्रामीणों के लिए आज भी आदर्श पुरुष हैं। झगरू मुंशी मुहर्रिर थे। कचहरी की कमाई से जमींदारी में दो पाई हिस्सा उस गांव का खरीद लिया था उन्होंने। आज भी उनके नाती-पोते उन्हीं की कमाई पर मौज उड़ा रहे हैं। उनकी स्वर्गवासी आत्मा की जय-जयकार कर रहे हैं। झगरू मुंशी को अपने जीवन काल में हजारों गरीब किसानों को झूठे मुकदमों में फँसा कर उन्हें बरबाद कर देने का जस अब तक मिलता है।

आजादी के बाद गांव के पास हाई स्कूल खुल जाने से शिक्षा के प्रति तेजी से झुकाव हुआ। उधर ग्रामीण नवयुवक पढ़ाई को पार्ट टाइम काम मानकर नौटंकी से लेकर नेताबाजी तक में अधिक समय देने के कारण हाई स्कूल की दीवाल को अभेद्य मानकर कर्मक्षेत्र में उतरते गये। अभि-भावक उनके कर्मक्षेत्र की सीमा कचहरी की मुंशीगिरी से लेकर सेठ की मुनीमी तक मानते और संतुष्ट रहते। नतीजा यह कि एक-एक वकील के पास चार-चार, पांच-पांच मुंशी लोगों का जमघट हुआ। एक तहरीर लिखने के लिए। एक मिसिल नोट करने के लिए। एक पान लाने के लिए। एक मुख्तार साहब के घर तरकारी पहुंचाने के लिए। अगर मुख्तार साहब कुछ मनचले हुए तो रात को उनका बिस्तर गरमाने के लिए। इस प्रकार एक ही जगह पर चार-चार, पांच-पांच मुंशी। इसमें वकील

मुख्तारों को भी कोई असुविधा नहीं। किसी को शाम को चार आना। किसी को एक रुपया। किसी को डेढ़। वह भी मुवक्किलों की जेब से। इस भाव पर इतने उपयोगी नौकरों की संस्था का विरोध कचहरी में प्राण तक हरण कर लेने को तैयार वकील या मुख्तार कैसे कर सकते हैं।

दरजा चार के बाद जिस जगह आकर शिक्षा की रेल पटरी से उतर जाय वही जगह कचहरी पहुँचाने का टेसन बन जाती है। अब तक का नालायक विद्यार्थी अब बाप के लिए लायक कमाऊ पूत हो जाता है। कचहरी का मुंशी बन जाता है।

इसके और भी अनेक फायदे हैं। बेटा कचहरी में रहता है तो बाप को इसका घमंड कि बेटा वकील-मुख्तारों में रहता है। कानून जानता है। अब पटवारी खेत पर दूसरे का नाम नहीं चढ़ाएगा। कुछ माँ-बाप तो इतने ही से प्रसन्न रहते हैं कि बेटे के होले से मुख्तार साहब की कुरसी तक पहुँच कर सलाम कर आने और उसके बल पर अपने कमजोर पट्टीदारों और गाँववालों को दबाने का मौका मिल जाता है। इतना ही नहीं, कुछ भी पढ़े बिना भी लड़का चालू है तो कचहरी ही उसका घर-द्वार हो जाता है। वहाँ अपने सहपाठी या हम-उम्र मुंशी जी लोगों तक मुवक्किल फँसा कर ले जाने में भी सोलह आने रोज की कमाई हो जाती है।

इसके अलावा हल चलानेवाले से लेकर खेत के मेंड़ पर जवान मजदूरिनों की ओर दिन भर घूरते रहने वाले बाबू लोगों तक सबका शाम के वक्त कस्बे आना बहुत जरूरी काम है। इसमें आर्थिक स्थिति के हिसाब से दो गोल है—एक बड़ी गोल है दारू और ताड़ी के साथ कलिया का चिखना उड़ानेवाली। दूसरी छोटी गोल, जिसकी किस्मत में चाह के साथ पाँच पैसे की पकौड़ी ही होती है। अब तो एक सनीमा भी खुल गया है। कस्बे के आकर्षण में और वृद्धि होती जा रही है। शाम को कचहरी से छूटे मुंशी जी लोगों और गाँव से खेती मजदूरी करके रंग छानने के लिए कस्बे की ओर गए छैला लोगों की संगमस्थली है दारू की भट्ठी। ताड़ीखाना। चौराहे की दूकानें। सनीमा। वहाँ घड़ी-दो घड़ी मौज मारकर अपनी-अपनी गोल में रात उतरने के साथ ही गाँव की ओर आते हुए ये रसिक अक्सर भीड़ के रूप में ही लौटते हैं। किसी-किसी दिन आमदनी ज्यादा

हो जाने पर या रास्ते में कोई दुर्घटना हो जाने पर भीड़ का रुख ऐसा हो जाता है कि गांव के लोगों को भी इसमें दखल देने की जरूरत पड़ जाती है। गांववालों को अब इस प्रकार की घटनाओं की आदत पड़ गयी है उन्हें अचरज पहले होता था। अब नहीं।

आज भी भीड़ इसी प्रकार की है। इसमें समझू चौबे के मिडिल फेल ज्येष्ठ पुत्र गिरधर मंशी इतना पी गए हैं कि अपने पैरों चल नहीं सकते। उनको उठा कर कस्बे से गांव की ओर आ रहे लोगों को रास्ते में एक दूसरी भीड़ मिल गयी थी, जिसमें गोपी तिवारी के मँझले बाबू रास्ते के किनारे गन्ने के खेत में गांव की एक मुसलमान लड़की के साथ कीर्तन करते हुए पकड़े गए थे। मुसलमान तिवारी को लगातार पीटे जा रहे थे। इन दोनों को लादकर कस्बे से लौटनेवाले लोग आ रहे थे कि रास्ते में गिर-गिटवा ने गांव की पंचायत को सूचना दे दी जिससे उत्तेजना और बढ़ गयी।

अब कुछ लोग हिन्दू-मुसलमान राइट की दुहाई देकर समझा रहे हैं। कुछ काशी के साथ हुए अन्याय के खिलाफ आवाज उठा रहे हैं। कुछ काशी को ब्राह्मणों पर लांछन लगाने के लिए कोस रहे हैं।

सबसे आगे गुदई पण्डित ताड़ी के नशे में नाचते हुए चल रहे हैं। उन्हीं के साथ ताल देता गिरगिटवा अपने पागलपन की मौज में झूम रहा है। यह भीड़ आकर पंचायत में मिल-सी गयी है। अब तो पंचायत बिखर जाएगी। सब लोग अपने-अपने घर चले जाएँगे। नहीं तो नये सिरे से बैठेगी। अभी तो खाली हल्ला है। किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा है कि क्या किया जाए। सभी लोगों के दिल कुछ घटित होने की आशा और आशंका में धड़क रहे हैं।

जुम्मन शेख की बेवा इतने में छाती पीट-पीट कर जोर-जोर से रोती हुई आती है। सबका ध्यान उसकी ओर खिंच जाता है। खेत की घटना उसे कई लोगों ने कई रूपों में सुनायी। किसी ने कहा, प्यारू बाबा के साथ तुम्हारी शहनाज को भी गांववालों ने मारा है। किसी ने कहा है कि शहनाज डर के मारे भाग गयी है। कस्बे की ओर। जितने लोग उतनी बातें। इतनी ही देर में उसे कुछ लोगों ने थाने चलने की भी राय

दे दी है।

थाने वह नहीं जाएगी। उसे याद है। बेवा होने के थोड़े ही दिनों बाद अपने देवर के खिलाफ रपट लिखाने वह थाने गयी थी। जहां रात-भर उसे बाघ-चीतों जैसे सिपाहियों से जूझना पड़ा था। सवेरे थाने के दीवान ने हँसकर कहा था कि फिर आना तब तहकीकात में चलेंगे। मन-ही-मन उसने कहा था कि अब वह कभी नहीं आएगी। महीनों बदन में दर्द होता रहा। यही सोच-सोच कर उसका रोना और बढ़ जाता कि अगर कहीं उसकी शहनाज इन गांववालों के डर से कस्बे की तरफ भाग गयी और थानेवालों के हाथ पड़ गयी तब तो बेचारी नाजुक लड़की मर ही जाएगी।

प्यारू तिवारी से लड़की के रब्तजब्त की बात का पता तो उसे था ही। इसके प्रति प्रकट रूप में उसने कोई अरुचि कभी नहीं दिखाई। प्यारू के बाप गोपी बाबा तो उसी के आशिक रहे हैं। जुम्मन जिन्दा थे तब भी गोपी बाबा की राहें उसी के घर से होकर जाती थीं। जुम्मन के मरने के बाद बदनामी के डर से बाबा जी ने अपने ही खलिहान में इन्तजाम कर लिया था। अब तो बेचारे दमे से जर्जर हैं। कभी भी दम तोड़ देंगे। मगर उस घर से वह सम्बन्ध ज्यों-का-त्यों बना हुआ है। अब अगली पीढ़ी में चला आया है।

प्यारू और शहनाज की रंगरेलियों से मुसलमान युवकों में असंतोष भीतर-ही-भीतर बहुत बढ़ गया था। वे ऐसे ही किसी मौके की तलाश में थे। आज उन्हें यह मौका सहज ही मिल गया। प्यारू की ठुकाई करते हुए कुछ ने यह भी कहा कि चलो साले को मुसलमान बनाकर इसी से शहनाज का निकाह करवा दिया जाय। इस समय भी मुसलमानी टोले में इकट्ठे होकर वे सभी कोई तैयारी कर रहे हैं। भीतर ही भीतर। इसकी भनक लोगों को मिल गयी है।

जुम्मन की बेवा पंचों से अपनी लड़की मांग रही है। वह कहती है कि इन सबने मिलकर हमारी बेटी को मारकर कहीं गाड़ दिया है। हाय बेटी ! वह रोती जाती है और नाटकीयता की ओर से सचेत रहकर छाती पीटती जाती है। बीच-बीच में लम्बे-लम्बे वाक्य सधी हुई लय [illegible] है

हो जाने पर या रास्ते में कोई दुर्घटना हो जाने पर भीड़ का रुख ऐसा हो जाता है कि गांव के लोगों की भी इसमें दखल देने की जरूरत पड़ जाती है। गांववालों को अब इस प्रकार की घटनाओं की आदत पड़ गयी है। उन्हें अचरज पहले होता था। अब नहीं।

आज भी भीड़ इसी प्रकार की है। इसमें समभू चौबे के मिडिल फेल ज्येष्ठ पुत्र गिरधर मुंशी इतना पी गए हैं कि अपने पैरों चल नहीं सकते। उनको उठा कर कस्बे से गांव की ओर आ रहे लोगों को रास्ते में एक दूसरी भीड़ मिल गयी थी, जिसमें गोपी तिवारी के मँझले बाबू रास्ते के किनारे गन्ने के खेत में गांव की एक मुसलमान लड़की के साथ कीर्तन करते हुए पकड़े गए थे। मुसलमान तिवारी को लगातार पीटे जा रहे थे। इन दोनों को लादकर कस्बे से लौटनेवाले लोग आ रहे थे कि रास्ते में गिर-गिटवा ने गांव की पंचायत की सूचना दे दी जिससे उत्तेजना और बढ़ गयी।

अब कुछ लोग हिन्दू-मुसलमान राइट की दुहाई देकर समझा रहे हैं। कुछ काशी के साथ हुए अन्याय के खिलाफ आवाज उठा रहे हैं। कुछ काशी को ब्राह्मणों पर लांछन लगाने के लिए कोस रहे हैं।

सबसे आगे गुदई पण्डित ताड़ी के नशे में नाचते हुए चल रहे हैं। उन्हीं के साथ ताल देता गिरगिटवा अपने पागलपन की मौज में झूम रहा है। यह भीड़ आकर पंचायत में मिल-सी गयी है। अब तो पंचायत बिखर जाएगी। सब लोग अपने-अपने घर चले जाएँगे। नहीं तो नये सिरे से बैठेगी। अभी तो खाली हल्ला है। किसी की समझ में कुछ नहीं आ रहा है कि क्या किया जाए। सभी लोगों के दिल कुछ घटित होने की आशा और आशंका में धड़क रहे हैं।

जुम्मन शेख की बेवा इतने में छाती पीट-पीट कर जोर-जोर से रोती हुई आती है। सबका ध्यान उसकी ओर खिंच जाता है। खेत की घटना उसे कई लोगों ने कई रूपों में सुनायी। किसी ने कहा, प्यारू बाबा के साथ तुम्हारी शहनाज को भी गांववालों ने मारा है। किसी ने कहा है कि शहनाज डर के मारे भाग गयी है। कस्बे की ओर। जितने लोग उतनी बातें। इतनी ही देर में उसे कुछ लोगों ने थाने चलने की भी राय

दे दी है।

थाने वह नहीं जाएगी। उसे याद है। वेवा होने के थोड़े ही दिनों वाद अपने देवर के खिलाफ रपट लिखाने वह थाने गयी थी। जहाँ रात-भर उसे वाघ-चीतों जैसे सिपाहियों से जूझना पड़ा था। सवेरे थाने के दीवान ने हँसकर कहा था कि फिर आना तव तहकीकात में चलेंगे। मन-ही-मन उसने कहा था कि अव वह कभी नहीं आएगी। महीनों वदन में दर्द होता रहा। यही सोच-सोच कर उसका रोना और वढ़ जाता कि अगर कहीं उसकी शहनाज इन गाँववालों के डर से कस्वे की तरफ भाग गयी और थानेवालों के हाथ पड़ गयी तव तो वेचारी नाजुक लड़की मर ही जाएगी।

प्यारू तिवारी से लड़की के रब्तजब्त की वात का पता तो उसे था ही। इसके प्रति प्रकट रूप में उसने कोई अरुचि कभी नहीं दिखाई। प्यारू के वाप गोपी वावा तो उसी के आशिक रहे हैं। जुम्मन जिन्दा थे तव भी गोपी वावा की राहें उसी के घर से होकर जाती थीं। जुम्मन के मरने के वाद वदनामी के डर से वावा जी ने अपने ही खलिहान में इन्तजाम कर लिया था। अव तो वेचारे दमे से जर्जर हैं। कभी भी दम तोड़ देंगे। मगर उस घर से वह सम्वन्ध ज्यों-का-त्यों वना हुआ है। अव अगली पीढ़ी में चला आया है।

प्यारू और शहनाज की रंगरेलियों से मुसलमान युवकों में असंतोष भीतर-ही-भीतर वहुत वढ़ गया था। वे ऐसे ही किसी मौके की तलाश में थे। आज उन्हें वह मौका सहज ही मिल गया। प्यारू की ठुकाई करते हुए कुछ ने यह भी कहा कि चलो साले को मुसलमान वनाकर इसी से शहनाज का निकाह करवा दिया जाय। इस समय भी मुसलमानी टोले में इकट्ठे होकर वे सभी कोई तैयारी कर रहे हैं। भीतर ही भीतर। इसकी भनक लोगों को मिल गयी है।

जुम्मन की वेवा पंचों से अपनी लड़की माँग रही है। वह कहती है कि इन सवने मिलकर हमारी वेटी को मारकर कहीं गाड़ दिया है। हाय वेटी ! वह रोती जाती है और नाटकीयता की ओर से सचेत रहकर छाती पीटती जाती है। वीच-वीच में लम्वे-लम्वे वाक्य सधी हुई लय में वोलती

जानी है।

भीड़ में कुछ लोग उसी को घेरकर खड़े हो गए हैं। कुछ तो यह राय भी जाहिर कर रहे हैं कि इसी ने शहनाज को कहीं छिपा दिया होगा। अब पंचाइत और बिरादरी के डर से नौटंकी कर रही है।

हरखू और मोहन बाबू उत्तेजित होकर आपस में कुछ राय-मशवरा कर रहे हैं। गिरगिटवा कभी इनका, कभी उनका मुंह देखकर मन-ही-मन हंस रहा है।

सब हंगामे को दबाती हुई दहाड़ने की ऊंची, कर्कश, लड़खड़ाती हुई आवाज उभरती है। सब लोग एक साथ ही घूम कर देखते हैं। कीचड़ में लदे-फदे डगमगाते हुए पंचायत को ललकार रहे हैं विकरम चौधरी। देशी शराब की तेज बदबू उनके चारों ओर लिपटी है। लड़खड़ा कर गिरते-गिरते बच रहे हैं। हाथ-पैर फेंक-फेंककर चीख रहे हैं। किसी की ओर नहीं देखते हुए वे सीधे खटिया की ओर बढ़ रहे हैं, जहां पंचायत के सरदार लोग बैठे हैं। भीड़ में आतंक, कुतूहल, चुलबुलेपन की एक लहर दौड़ गयी है।

खटिया के ठीक सामने पहुंचकर विकरम चौधरी धाराप्रवाह बोलने लगते हैं, "का हो बाबा कैसी पंचाइत कर रहे हैं आप लोग। कौना साला सुअर खाया है। कौन साला डांड़ लगाता है। बड़े आये हो राजा विकरमाजीत के नाती। कोई आदमी अपने मन से कुछ खाता है तो पंच के बाप का क्या लगता है। हम खाता है सुअर का गोस्त। किसके बाप के डर से न खाएं। निकालो हमको बिरादरी से। लगाओ हमको डांड़। किसको-किसको डांड़ लगाओगे। मोहन बाबू कहां हैं? बुलाओ बबुआ मोहन परसाद को। धरमू बाबा को बुलाओ। हम बताते हैं। कौन क्या खाता है। भट्ठी पर सात तरह का चिखना मिलता है। घुघनी, पकौड़ी, कलेजी, समोसा, मछली, दो किसिम का गोस्त—मसालेदार गोस्त बकरी का, सादा गोस्त सुअर का। रोज बनता है; बाबा लोग पहले वही चखता है। चलो हम दिखाता है। ऐ मोहन बाबू! ऐ धरमू बाबू! काहे चुप हो; बोलते काहे नाहीं। तुमहूं तो खाए हो; काहे नाहीं बोलते हो।"

हंसते हैं विकरम चौधरी।

सबकी आंखें मोहनबाबू को खोजने के लिए घूमती हैं। वे कहीं दिखायी नहीं देते। सब लोग सन्न रह जाते हैं। सिर्फ विकरम चौधरी की डूबती हुई आवाज सुनायी पड़ती है—

"भट्ठी पर साला रोज खाता है। हम एक दिन चोकट भाई के घर खा लिया तो हमको बिरादरी से बाहर करेगा। बड़का कहां है। धरमू को बुलाओ और मोहन बाबू को भी। आज उनको भी सबके सामने खिलाएगा। आज मुंडवा को भी खिलाएगा।"

सतुआ काका बेहोश हो जाते हैं। वे खटिया पर से लुढ़क पड़ते हैं। उन्हें संभालने को लोग बढ़ते हैं तो देखते हैं कि औतार बाबा की आंखों से झर-झर पानी बरस रहा है। बिरजू बाबा घुटनों में सिर गाड़े बैठे हैं। ऐसा लगता है कि वे जम कर पत्थर बन गए हैं।

दूर पर काशी ज्यों का त्यों खड़ा है।

गिरगिटवा बाबा जी लोगों को समझा रहा है, "बाबाजी। शराबी की बात का क्या भरोसा। आप लोग देवता हैं। देवता। विकरम चौधरी की बात से उदास होते हैं, वह तो पियक्कड़ है। आप लोग देवता हैं।"

गांव में कोई बहुत बीमार हो जाता है, मरने-जीने की नौबत आ जाती है और शहर से डाक्टर साहब आते हैं तब इन बच्चों के लिए सबसे अच्छा मौका होता है। भर्र-भर्र करती मोटर के आगे-पीछे दौड़ते बच्चे ड्राइवर की नाक में दम कर देते हैं। जिस घर में मरीज पड़ा रहता है उस घर का आदमी मोटर में साथ ही बैठा होता है। वह जल्दी-से-जल्दी मोटर को अपने घर की ओर ले जाने को आतुर होता है। इधर बच्चों के झुण्ड के कारण ड्राइवर जोर से गाड़ी चला नहीं पाता। वह आदमी उतर कर एकाध बच्चे को तमाचा भी मार देता है। बच्चों का झुण्ड बिखर जाता है किन्तु उस घेरे को सिमटते भी देर नहीं लगती।

आजकल पास के कस्बे से लेकर शहर वाली सड़कों पर टैक्सी की भरमार हो गयी है। गांव आने वाले शौकीन बाबू लोग पहले कस्बे से रिक्शे पर घर आते थे। अब टैक्सी पर आते हैं। इसलिए अब टैक्सी या मोटर गांव के बच्चों के लिए नई चीज नहीं रह गयी है फिर भी जहां एक बार भर्र-भर्र की आवाज हुई कि लड़के सब खेल छोड़कर इकट्ठे हो जाते हैं। यह कहते हुए दौड़ पड़ते हैं 'टिकठी आइल' 'टिकठी आइल'। टिकठी मुर्दा ले जाने वाली बांसों की सीढ़ी को कहते हैं। गांव तक आकर उच्चारण की सहजता के कारण टैक्सी ही 'टिकठी' हो जाती है। बड़े-बूढ़े तक हाथ का काम छोड़कर निकल आते हैं। उतरने वाले आदमी की आफत हो जाती है कि कैसे भीड़ को ठेलकर गाड़ी से बाहर निकले।

इधर मालिक के बड़का बाबू रोज टैक्सी से आने लगे हैं। जब कस्बे में इतना पी लेते हैं कि खड़े होने लायक नहीं रहते तो कोई टैक्सी वाला उन्हें लादकर घर पहुंचा देता है। जब से मालिक बाबू मरे हैं तब से आसपास के इलाके में बड़का बाबू का नाम बज गया है। कोई गुंडा दो-चार कोस का कोई ऐसा नहीं है जो बड़का बाबू को सलाम न करता हो। टैक्सी वाले तो बड़का बाबू के भरोसे ही किसी को कुछ नहीं समझते। इसलिए बड़का बाबू को वक्त-बेवक्त गांव पहुंचा देने के लिए कोई टैक्सी वाला पैसा नहीं लेता। गांव के बच्चों पर बड़का बाबू का यह बहुत बड़ा एहसान है। भला हो बड़का बाबू का और उनके दारू पीने का, कि बच्चों को रोज मोटर देखने को मिल जाती है। रात को मोटर देखने का मजा

ही और है—आगे-आगे तेज रोशनी की नदी उमड़ती चलती है और पीछे-पीछे लड़कों का रेला बढ़ता है।

जाड़े की दोपहर में घाम-घमौना खेलते बच्चों को आज सवेरे-सवेरे ही मोटर महारानी के दरसन हो गये। गाँव के छोर पर भर्र-भर्र हुआ नहीं कि घाम का मोह छोड़कर लड़के उमड़ पड़े। मोटर घिर गई। आज न तो मोटर में कोई डाक्टर साहब बैठे हैं झोला लटकाये, न कोई पुलुस दरोगा हैं। आज बड़का बाबू भी औंधे मुँह पीछे की सीट पर गिरे हुए नहीं हैं। आज आगे की सीट पर ड्राइवर साहब की बगल में एक नया साहब बैठा है। गरदन सीधी। जैसे रामलीला में रावण का सिर एकदम सीधा तना रहता है। सिर पर हैट है। 'हैट नहीं रे, कनटोप है कनटोप' एक लड़का कहता है। दूसरा उसे कुहनी से ठेलता हुआ कहता है, 'चुप बे, अँगरेजी कनटोप है।' 'मारेगा। चुप, चुप।' आँखों पर काले रंग का चश्मा है जिसने आधा मुँह ढँक गया है। मुँह में सिगरेट दबी हुई है। भकभक् धुआँ छोड़ता है। पीली और काली धारियों वाला मोटा कोट है जिसके ऊपर चीते की खाल जैसा मफलर पड़ा हुआ है। लड़के हैरान हैं। ऐसा साहब तो कभी नहीं देखा भाई। कहाँ से उतरा है यह। फिलिम वाला तो नहीं है।

मोटर आकर बीच गांव में पीपल के पेड़ के नीचे रुकती है। ड्राइवर साहब बगल में बैठे साहब से पूछते हैं, किधर चलें साहब! आपका घर किधर है? साहब चश्मे से ढँकी आँखें उसकी ओर करते हैं। मानो कह रहे हों कि यह ड्राइवर कैसा अनाड़ी है। ड्राइवर कुछ नहीं समझता। फिर कहता है, हे साहेब! आप किसके घर जाइयेगा?—यहीं रोक दो गाड़ी।—बुलन्द आवाज में बोलते हैं साहब। गाड़ी रुक जाती है। लड़के चारों ओर से घेर लेते हैं। भगत के नांद पर धूप में कुछ लोग बैठे हैं। वे लोग भी उठकर चले जाते हैं। मोटर का फाटक खोलकर एक ओर से ड्राइवर साहब उतरते हैं, दूसरी ओर से साहब उतरते हैं। लड़कों के अचरज का ठिकाना नहीं रहता जब ड्राइवर साहब मोटर के पीछे जाकर मोटर का ढकना उठा देते हैं। उसमें कोठरी बनी है। मोटर की कोठरी

में से दो बक्से निकलते हैं, जिन पर बड़े-बड़े फूल छपे हैं। एक टोकरी उतरती है। एक गोल गोल बँधा हुआ बण्डल है। सामान उतारकर ड्राइवर साहब खड़े हो जाते हैं। साहब पीछे वाली जेब में से दस रुपये का नोट निकालकर देते हैं। ड्राइवर साहब अपनी जेब में से कुछ निकालना चाहते हैं। चश्मे वाले साहब हाथ से इशारा करके रोक देते हैं ड्राइवर साहब मुस्कराकर सलाम करते हैं। साहब जवाब नहीं देते। ड्राइवर साहब मोटर में बैठकर फुर्र हो जाते हैं। चश्मे वाले साहब सामान के साथ खड़े रह जाते हैं। लड़के आज मोटर के पीछे नहीं लौटते। सब वहीं खड़े रह जाते हैं। कुछ बड़े लोग भी जमा हो जाते हैं। साहब की आँखें दिखाई नहीं पड़तीं। लोगों में साहब से सीधे कुछ कहने-पूछने की हिम्मत नहीं। आपस में खुसुर-पुसुर चल रही है।

"मलेरिया वाले साहब हैं।"

"धत्। चकबन्दी वाले होंगे। चकबन्दी होने वाली है न।"

"अरे नहीं भाई! कारड बनाने वाले साहब होंगे।"

"तो इतना बकसा बगुना काहे भैया।"

"हां भाई! ई बात तो है।"

"मोहन बाबू को बुला लाओ। उनसे वही बात करिहैं।"

"वकील साहब के साथी होंगे।"

यह कहने वाला बढ़कर साहब के करीब पहुँच जाता है। साहब का चश्मा उसकी ओर घूमता है।

"साहब! वकील साहब का घर पूछते हैं?"

"आप लोग हमको नहीं चीन्हते हो?"—साहब की आवाज सुनायी पड़ती है। गाँव वाले एक-दूसरे का मुँह देखने लगते हैं। चलो बोला तो कुछ यह ढोका वाला।

साहब के चेहरे पर मुस्कान झलकती है, लेकिन उनके बड़े चश्मे के भीतर उनकी आँखें छिपी हुई हैं, इसलिए गाँव वालों पर उस मुस्कान का अर्थ नहीं खुलता। वे चकित होकर देखते रह जाते हैं। कुछ और लोग इकट्ठे हो गये हैं। एक ओर से वकील साहब उर्फ हरनारायण मौर्य भी आ जाते हैं। पहले तो वे भीड़ पर नाराज होते हैं, फिर साहब की ओर

नजर पड़ते ही उधर बढ़ जाते हैं । साहब को ऊपर से नीचे तक देखते हैं । फिर कमर पर हाथ रखकर साहब को आंखों-आंखों में ही तौलते हुए पूछते हैं—

"कहां से आ रहे हैं ? किससे मिलना चाहते हैं ?'

साहब की मुस्कान और चौड़ी हो जाती है । अबकी बार वे खुलकर हंसते हैं । साहब कहते हैं—

"का भाई हरखू, अब तुम भी हमको नहीं चीन्होंगे !"

"आपको तो मैं नहीं पहचानता । कुछ बताइये तब जानें ।"

"अब अपने गांव के आदमी को भी बताना पड़ेगा ।'

"गांव का आदमी !" हरखनारायन मौर्य उछलकर साहब का चश्मा उतार लेते हैं । चश्मा उतारने के साथ ही कई लोग चीख पड़ते हैं—

"अरे, ई तो गोपला है ।" साहब का चेहरा गुस्से से तन जाता है । फिर कोशिश करके वे हंसते हैं । हें, हें, हें, हें ।

"हां हां आप लोग गांव के आदमी को नहीं चीन्हते हैं ।"

"अरे तो गांव का आदमी आंख पर कोल्हू के बैल वाला ढोका थोड़े लगाता है ।

"ए गोपाल, जाड़े में धूप का चश्मा क्यों लगाते हो ?"

"हरखू भाई ! छोड़ो चश्मा-वश्मा की बात । बताओ गांव का क्या हालचाल है ?"

"ठीक ही है । दस बरस बाद आ रहे हो । तुम्हीं कुछ बताओ । कहां थे अब तक । बहुत रुपया कमाया है, लगता है । कौन-सी नौकरी करते हो । बड़े ठाट हैं तुम्हारे ।"

"ठाट तो हैं यार ! चलो, घर चलकर बातें करेंगे । इन लुच्चड़ लोगों के सामने क्या बतायें । तुम पढ़े-लिखे आदमी हो । बात तो समझते ही हो ।"

दौड़कर कुछ लड़के रामजस बाबा को खबर दे आते हैं । रामजस बाबा कमर में सरकती हुई धोती को बांधते हुए आते हैं । गोपाल उनके पांव छूते हैं । रामजस बाबा की आंखों से आंसू झरने लगते हैं । दस साल के बाद अपने बेटे का मुंह देख रहे हैं वे । उन्हें विश्वास हो चला था कि

अब उनका लड़का जिन्दा नहीं बचा है। आज उसी को साहबी ठाट में देखकर खुशी से उनकी रुलाई नहीं रुकती। गांव के लोग आगे बढ़कर सामान उठा लेते हैं। रामजस बाबा के घर की ओर एक जुलूस-सा चल पड़ता है। दरवाजे पर पहुंच कर गोपाल अपनी माई को देखते ही बच्चों की तरह फूट-फूटकर रोने लगते हैं। उनकी माई की आंखों में मोतियाबिन्द है। गांव की औरतें कहती हैं रो-रोकर अन्धी हो गयी बेचारी। एक आंख बची है जिस पर बेडौल-सा चश्मा चढ़ गया है। गोपाल को टटोल कर पहचानती हैं और बेटे से लिपटकर रोने लगती हैं। गांव के लोगों की आंखें छलछला रही हैं। आज बुढ़िया का भाग जग गया। धन्न भाग। धन्न।

गोपाल के स्वागत में रामजस बाबा और गांव के लोग ऐसे जुट जाते हैं जैसे कोई अफसर मेहमान होकर आया है। हरखनारायन मौर्य थोड़ी देर खड़े रहते हैं, फिर गोपाल के कन्धे पर हाथ मारकर कहते हैं, अच्छा भाई! कचहरी जाना है। शाम को लौटेंगे तब बातें होंगी। हरखू चले जाते हैं, कुछ उदास-उदास गुमसुम। सोचते जाते हैं, यह गोपला गोबर-गणेश था एकदम आज हाकिम हो गया है।

बच्चों के लिए अब चुप रहना मुश्किल हो रहा है। उनमें ज्यादा बच्चे दस साल से कम के ही हैं। गोपाल को सबके सब बच्चे पहली बार देख रहे हैं। वे यह तो समझ लेते हैं कि गोपाल नाम वाला यह साहब उन्हीं के गांव का है। मगर उसके ठाट-बाट से बच्चे मन-ही-मन आतंकित हैं। धीरे-धीरे आपस में खुसुर-फुसुर बातें करने लगते हैं। उनकी बातें जल्दी ही शोर में बदल जाती हैं। गोपाल माई से कहते हैं कि टोकरी में मिठाई है, बच्चों को बांट दो। रामजस बाबा बच्चों को मिठाई देते जाते हैं। आंखें पोंछते जाते हैं। उनके आंसू रुकते ही नहीं। बच्चे एक बार मिठाई लेकर चले नहीं जाते। बार-बार लेना चाहते हैं। उनके लिए इस घर से मिठाई मिलना भी वैसे ही नया अनुभव है जैसे अपने गांव में हैट और टोका लगाये साहब देखना। मिठाई लेकर भी बच्चे खड़े रहते हैं। आज दिन भर बच्चे इस दरवाजे से जाने वाले नहीं।

गांव के लोगों का तांता बंधा हुआ है। लोग आते हैं। रामजस बाबा के भाग की सराहना करते हैं। गोपाल से कुशल समाचार पूछते हैं। मिठाई पाते हैं और चले जाते हैं। तब तक दूसरे लोग आ जाते हैं। रामजस बाबा का आंगन हर उमर की औरतों से भरा हुआ है। सबके बीच घिरी गोपाल की माई कभी रोती है, कभी हँसती है। औरतें उनके भाग का बखान करती नहीं अघातीं। धन्न भाग। धन्न भाग।

"बड़ा पुन्न किया है गोपाल की माई।"

"हां, नहीं तो दस बरस बाद बेटा लौट आया।"

"लौट ही नहीं आया। साहब बन आया है।"

"एकदम शहर के हाकिम जैसा।"

"जब गये थे गोपाल बाबू तो छटंकी भर के रहे।"

"हाथ-पांव में जान नहीं रही।"

"अब तो गबरू जवान हो गये हैं।"

"अब तो गोपाल के माई बेटे का बियाह जल्दी करें। दुलहिन आवे। हां नहीं तो क्या? आंगन भर की पतोहू आये।"

गोपाल की माई सब सुन रही हैं। भीड़ में रास्ता बनाते बाहर से रामजस बाबा आते हैं। उनका बूढ़ा चेहरा खुशी से दमक रहा है।

"अरे लड़कवा के कुछ पानी पीये के दिया जाय।"

"शर्बत बना लो।"

"शर्बत पसन्द करी। शहरी लड़का है।"

"तब उनही से पूछ लिया जाय।"

"ई ठीक।" कहते हुए रामजस बाबा लौट जाते हैं।

गोपाल की माई की समझ में नहीं आता है कि क्या करें। पहले गोपाल एक टुकड़ा गुड़ के लिए कितना मचलता था। पा जाने पर माई को बाहों में घेरकर खुशी से नाचने लगता था। अब वह इतना बड़ा आदमी हो गया है। गोपाल की माई की समझ में नहीं आ रहा है कि बेटे को क्या खिलायें। बाहर से रामजस बाबा कहते हैं—

"बाबू चाह पीहें। चाह बना द।"

गोपाल की माई की समझ में नहीं आता कि चाह कहां मिले।

"हम साधू की दूकान से ला देते हैं।" गोपाल की माई के सामने पड़ोस की मुनियाँ कहती है। उसने खुद ही ढूँढ़कर गिलास उठा लिया है। खड़ी है तो गोपाल की माई कहती है, "ले आउ।" वह फिरभी खड़ी रहती है। तब एक दूसरी औरत बोलती है—"सधुइया उधार नाहीं देई। पैसा दे दीं मतवा।"

मुनियाँ जाने लगती है तो एक सयानी औरत टोकती है—"सधुइया कि हाँ के बनल चाह बाबू न पीहें। चाह के पाती ले आउ।"

गोपाल की माई थोड़ी देर में ढूँढ़कर पैसे ले आती है। मुनियाँ दौड़-कर चाय की पत्ती ले आती है। गोपाल बाबू बिस्कुट निकालते हैं। कहते हैं 'चाय बनाओ, हम नाश्ता कर लें तब तक।' वे बिस्कुट कुतरने लगते हैं।

आज शाम को हरखनारायन मौर्य कचहरी से जल्दी लौट आये हैं। सीधे गोपाल के पास आये हैं। दोनों थोड़ी देर बाद ही उठ गये हैं। हरखनारायन जब से वकील हो गये हैं पण्डित लोगों के दरवाजे खटिया पर बैठने लगे हैं। उनको वहाँ कभी किसी-किसी के घर चीनी-मिट्टी की प्याली में चाय भी मिल जाती है। गोपाल के घर चाय बनती नहीं। हरखनारायन से कहते हैं कि चलो, कहीं किसी साधू की चाय की दूकान है। सबेरे माई ने मेरे लिए वहीं से चाय मँगायी थी। चलो, वहीं तुमको चाय पिलायें। दोनों उठ पड़ते हैं।

"हरखू भाई, ई गाँव में चाय की दूकान कब खुली ?"

"कई साल हुआ। दो-तीन साल पहले समझो।"

"ई साधू कौन है ?"

"अरे तूं बमड़वा को नहीं जानते।"

"वो बमड़वा साधू हो गया !"

"जैसे तुम दस बरस बाद गाँव में साहब होके लौटे हो, वैसे ही वह भी दो-तीन साल किसी साधू के साथ घूमता रहा। वहीं से कुछ रुपया उड़ाके ले आया। तब से गाँव में दूकान खोले है। साला बहुत बेईमान है। लेकिन हमसे डरता है।

"अब तुमसे नहीं डरेगा तो कहाँ रहेगा।"

"हाँ, कई बार साले को छुड़ाया है कचहरी में।"

"कौन केस में भाई !"

"वो चाय के साथ परचून की दूकान भी करता है न। मसाला में ईंटें पीसकर मिलाता है। एक बार इन्स्पेक्टर आ गया। चालान कर दिया। किसी तरह छुड़ाया।"

"इतना चालू हो गया है बमड़वा।"

"अरे पूछो मत। गाँव के लड़कों से पपीते का बीज इकट्ठा करवा के सुखाता है। काली मिर्च में मिलाकर बेंच देता है।"

"गाँव वाले उसको मारते नहीं हैं।"

"कैसे मारें ? सबको उधार जो देता है। किसी के यहाँ पाहुन आ जाय, सीधे उसी की दूकान से तरकारी, दाल, चाय लेने दौड़ते हैं। न दे, तो इज्जत जाय। इसलिए सब लोग उससे डरते हैं।"

"पहले तो मिलावट का धन्धा शहरों में ही था।"

"अरे तो गाँव कौन शहर से दूर है। अब आये हो। देखना। गाँव में दो घर अहीर हैं। एक के पास गाय भैंस कुछ है ही नहीं। दूसरे के पास भैंस है जो दो सेर दूध देती है। और वह गाँव में आठ जगह दूध देता है। दो सेर से आठ सेर। चाय केलिए लोग दूध पाव ही भर सही, मगर लेते जरूर हैं। बाबा लोगों के यहाँ चाय रोज बनती है। मेरे यहाँ बनती है। बाकी लोग साधू की दूकान पर चाय पीते हैं।"

"गाँव में सब लोग चाय पीते हैं क्या ?"

"कुछ बूढ़ों-बुढ़ियों को छोड़कर सभी मर्द पीते हैं। असली चाय पीने वाले तो वे हैं जो चाय-पकौड़ी के पीछे घर-खेत बेंच रहे हैं भाई। अब आये हो तो देखोगे ही। कई घर और खेत कस्बे की चाय की दूकानों पर रेहन रखे हैं।

दोनों साधू की दुकान पर आ गये हैं। गाँव के किनारे पर एक पक्की कोठरी। सामने छप्पर का बरामदा। वही दूकान है, वही गोदाम है एक ओर वहीं चूल्हा है। एक ओर गाँव के बढ़ई की बनाई हुई मेज है।

तीन-चार स्टूल हैं। एक टूटी हुई बेंच है। छप्पर के बाहर खटिया पड़ी है। बम्मड़ अब साधू कहलाने लगा है। साधू कोठरी के दरवाजे के बगल में चूल्हे के सामने बैठा हुआ है। उसके हाथ में चाय की छन्नी है। एक काली केतली चूल्हे पर चढ़ी है जिसमें से भाप निकल रही है। बगल में लोटे में दूध रखा है। पीतल का वह लोटा मैल और कालिख से काला हो गया है। मेज पर शीशे के आठ-दस गिलास रखे हुए हैं। एक ओर खांची में बीस-पचीस कुल्हड़ रखे हुए हैं। हरखनारायन और गोपाल बाहर की खटिया पर बैठ जाते हैं। साधू वहीं से बोलता है।

"राम, राम, गोपाल बाबू! हम तो सबेरे जान गए कि आप बड़े साहब बनके लौटे हैं। बैठिये, बैठिये। चाय बना रहे हैं।"

"अरे बम्मड़ भाई! साबू कब से हो गए?"

"साधू महात्मा में कुछ नहीं धरा है भइया! कुछ दिन साधू लोगों की जमात में रहे। तब से लोग हमको भी साधू कहने लगे। आपन हाल चाल बताओ। कैसे रहे? कहाँ रहे? बहुत कुछ देख लिया होगा! रुपया खूब बनाया है?"

"हम तो बम्बई रहे साधू! पहले तो इधर-उधर बहुत घूमते रहे फिर बम्बई में जम गए। अब तो वहीं बिजनेस करने का इरादा है। साल भर खूब मौज उड़ा लिया। क्या चीज है साली बम्बई भी।"

"क्यों भाई! साल भर क्या करते रहे?"

"कुछ नहीं, घूमना, सिनेमा देखना, शूटिंग देखना, मौज करना, रुपये की फिकर नहीं। तमाम नयी फिलमें बन रही हैं। आने वाली हैं। देखना दुनिया में हल्ला हो जाएगा। हम तो शूटिंग देखकर आ रहे हैं।"

"फिलिम की बात बाद में होगी। पहले यह बताओ गोपाल बाबू! इतना रुपया तुमको मिलता कहाँ से है?"

"अरे यार! मिलता नहीं है, बम्बई में रुपया बहुत है, मगर सबको कहाँ मिलता है। मैं तो रुपया कमाने के बाद बम्बई पहुँचा था यार मेरे!"

"तो रुपया कहाँ से कमाया?"

"बतायेंगे हरखू भाई, सब बतायेंगे, पहले चाय पियो।"

दोनों चाय पीने लगते हैं। तब तक गांव के दो-चार नौजवान और आ जुटते हैं। मोहन बाबू भी आ जाते हैं। उनके आते ही साधू अपन जगह से उठता है और एक स्टूल उठाकर उसको अपने गन्दे हाथों से पोंछकर बाहर खटिया के पास रख देता है। मोहन बाबू के लिए उसकी आंखों में इज्जत है। मोहन बाबू बैठ जाते हैं। बैठते ही गोपाल की ओर घूमकर पूछते हैं—

"कारे गोपला ! सुनते हैं तुम साहब हो गया है !"

"ए मोहन ! तमीज से बात कर यार ! अब भी गोपला लगा रखा है।" हरखू डांटते हैं।

"अरे ये बड़े भाई हैं वकील साहब ! इनका हक है।" मुस्कराते हुए गोपाल कहते हैं।

मोहन बाबू कुछ खिसिया जाते हैं। चुप होकर कुछ सोचते हैं कि गोपाल शहर में रहकर बड़ा आदमी बन गया है, इसमें गम्भीरता आ गई है। यह बात मन-ही-मन मोहन बाबू की समझ में आ गयी है। अगर गोपाल उनका जवाब देता तो मोहन उसे डांटते ही नहीं, मार भी बैठते। किन्तु गोपाल की विनय ने गांव के सबसे अविनयी मोहन बाबू को नरम कर दिया है। वे भी चाय पीने लगे हैं। गोपाल उनसे पूछते हैं—

"मोहन भाई ! आप आजकल क्या कर रहे हैं ?"

"अरे इनकी न पूछो गोपाल ! इनकी टोपी और हाथ की फाइल देख रहे हो ? मोहन बाबू एक साल में कोई दर्जा पास नहीं कर सके। हाई स्कूल की देहरी पर पढ़ाई-लिखाई को ठोकर मारकर कचहरी में चले गए। कई साल कचहरी में रहे। फिर इन्होंने आमदनी का सबसे अच्छा धंधा शुरू कर दिया। मोहन बाबू अब स्कूल चलाते हैं। जो दुबे जी मास्टर साहब मोहन को हमेशा क्लास से निकाल देते थे, उन्हीं को अपने स्कूल में मोहन बाबू ने प्रिंसिपल बना दिया। अब वे ही इनको सलाम करते हैं। मोहन बाबू खुद हाई स्कूल न पास कर सके तो क्या हुआ ? अब एम० ए० पास लोगों से पैर की धूल झड़वाते हैं।"

"यह तो समाज सेवा है भाई ! अब हम जनता की सेवा करते हैं

तो जनता कुछ इज्जत हमारी भी करेगी ही।" मोहन बाबू विनय से कहते हैं।

"हाँ हाँ क्यों नहीं। असल में यह भाषा भी समाज सेवी के लिए जरूरी होती है, मोहन बाबू।" हरखू कुछ विनोद के मूड में आ गया है।

"तुम तो यार पीछे पड़ जाते हो। तुम्हारी कचहरी में सब हरिश्चन्दर ही हैं न ?"

"अच्छा मैनेजर साहब, यह बताइए महीने में कितनी आमदनी हो जाती है।"

"अरे छोड़ो भाई ! आमदनी-खर्च तो लगा रहता है।"

"हाँ भई ! स्कूल चलाने का काम झंझट का तो है ही। सारा जीवन उस काम में लगाकर सौ-पचास की आमदनी नहीं की तो क्या फायदा। इसलिए उसकी बात छोड़ो।"

चाय खतम हो जाती है। सब लोग उठ पड़ते हैं। मोहन को बुलाने के लिए कुछ लोग आ गए हैं। वे एक ओर चले जाते हैं। गोपाल गाँव के सिवान की ओर खेतों में घूमना चाहते हैं। हरखनारायन से कहते हैं— "हरखू भाई, चलो जरा खेतों की ओर घूम आएँ। अपने गाँव के खेतों के लिए मैं तरस गया। एक बात बताएँ हरखू भाई ! हेमा मालिनी, सायरा बानू, मुमताज और राखी को जानते हो ? जब मैं बम्बई में उन सबके उघाड़े बदन देखता था तो खून की गरमी जरूर बढ़ जाती थी। मगर भीतर कुछ कोई चीज मेरे दिल को मसलने लगती थी। पता नहीं क्यों मुझे उस समय सिर्फ खेतों की याद आती थी। और भी एक खास बात है हरखू भाई, खेत तो हिन्दुस्तान भर में है, दुनिया भर में है मगर मुझे उन खूबसूरत लड़कियों के साथ सिर्फ अपने गाँव के खेतों की याद आती थी। उन खेतों की जिनकी मेंड़ों पर हम लोग नंगे बदन दौड़ते थे, मारते थे, झगड़ते थे। ऐसा क्यों होता था हरखू भाई ! खेत और खूबसूरत लड़की के ललकारते जिस्म में क्या संबंध हो सकता है ?" कहते-कहते गोपाल की आँखें गीली हो जाती हैं। हरखू समझ नहीं पाता। कोई और समय होता

तो हरखनारायन वकील तौहीन समझते इस बात में कि वे किसी दूसरे आदमी के साथ खेतों में घूमें। किन्तु इस समय गोपाल के रुपये ने और धन के प्रति उसकी बेफिक्री ने हरखनारायन के मन में विचित्र कुतूहल भर दिया है। हरखनारायन बिना कुछ बोले गोपाल के साथ चल पड़ते हैं। गोपाल खुशी से पागल हो रहे हैं। इधर हरखनारायन के मन में कचहरी घूम रही है। अपनी दिन भर की वकालत की बात सोच रहे हैं वकील साहब। दिन भर में कभी दो रुपये मिलते हैं, कभी वह भी नहीं। कई-कई दिन खाली चला जाता है। कुछ पुराने वकील हैं जिन्हें आता-जाता तो कुछ नहीं है, मगर दलालों के जरिए और चार सौ बीसी का धन्धा करके वे सैकड़ों रुपये रोज कमा लेते हैं। उतनी बेईमानी हरख-नारायन से हो नहीं सकती। जब गरीब किसान अपने रोते हुए चिथड़े दिखाने लगता है तो हरखनारायन एक रुपया लेकर ही उसका काम कर देते हैं। उधर पुराने घाघ वकील हैं। मुवक्किल चाहे कितना गरीब क्यों न हो, चाहे जितना रोए चिल्लाए—उससे पूरा पैसा वसूल करके ही कचहरी के दरवाजे पर पैर रखते हैं। वहाँ जाकर क्या हुआ? तारीख पड़ गई। हरखू सोचता है कि जब तारीख पड़ गई, तब वकील मेहनताना क्यों लेते हैं। मगर इसीलिए तो उसको कोई आमदनी नहीं हो पाती। जहाँ दूसरे वकील पानी की तरह पैसा बहा रहे हैं और दोनों हाथों से बटोर रहे हैं वहाँ हरखू अपने ईमान और दया-माया में मारे जा रहे हैं। बूढ़े वकील कहते हैं कि वकालत ईमानदारी और दया-माया से नहीं चलती। वकालत धूर्त विद्या से चलती है। कुछ तो ऐसे हैं कि हर केस में मुवक्किल से हजार-पाँच सौ घूस तय करते हैं। अगर मुकदमा जीत गया तो यह कह-कर हजम कर जाते हैं कि हाकिम को दिया था। तभी जीत हुई है। हार गए तो हाकिम को गाली देते हैं कि साले ने रुपया लेकर भी फैसला ठीक नहीं किया। एकाध मुवक्किल तेज होता है तो वकील की गर्दन पकड़-कर घूस वाला रुपया रखवा लेता है। हजार हथकण्डे हैं गरीब भोले किसानों को लूटने के। हरखू के वश की बात नहीं है, यह सब। आज गोपाल की खुशहाली के प्रति उसके मन में ईर्ष्या हो रही है। वह सोच रहा है कि बिना पढ़े-लिखे होकर या मिडिल से बराबर पढ़कर जब गोपाल

को इतनी अच्छी नौकरी मिल सकती है तो वह बी० ए०, एल० एल० बी० पास है, उसे तो शहरों में और अच्छी नौकरी मिल सकती है। यही सब जानने के लिए वह गोपाल के साथ खेतों की ओर निकल आया है।

खेतों में घूमते हुए गोपाल गांव भर की तमाम बातें जानना चाहता है। दस वर्षों में क्या से क्या हो गया। हरनारायन उसकी नौकरी का रहस्य जानने की जल्दी में हैं। थोड़ी देर 'हां हुं' करने के बाद उससे सीधे पूछ लेते हैं—

"गोपाल भाई ! अपनी नौकरी की बात बताओ। हमको भी कोई वैसी नौकरी नहीं दिला सकते।"

"वकालत छोड़कर नौकरी क्यों करोगे ?"

"वकालत का फरेब हमसे नहीं चलता भाई !"

"कैसा फरेब। तुम क्या समझते हो नौकरी में ईमानदारी से पैसे मिलते हैं ?"

"तनख्वाह तो मिलती है।"

"तनख्वाह के भरोसे तो भूजा भी खाने को न मिले इस जमाने में।"

"तब ! अच्छा कौन-सी नौकरी करते हो तुम ? और तनख्वाह के बाद क्या काम करते हो ?"

"नौकरी हम करते नहीं हैं। करते थे। अब छोड़ दिया है। मगर इतना कमा लिया है कि अब नौकरी की जरूरत नहीं रही।"

"क्यों ? क्या किया ? लाटरी निकल आयी ?"

"नहीं यार ! लाटरी के चक्कर में बेवकूफ पड़ते हैं। मेरी नौकरी की कहानी लम्बी है।"

"यही बताओ।"

"अच्छा सुनो। तुमको शुरू से ही सुनाता हूं। गांव से भागकर मैं लखनऊ चला गया। वहां एक नेता से भेंट हुई। पहले तो उसने पहचाना ही नहीं। पहचानता भी कैसे ? वोट के लिए आया था। उसके बाद

में कभी आया ही नहीं। लखनऊ में जब दो-तीन दिन भूखे रहना पड़ा तो एक आदमी ने बताया कि अपने क्षेत्र के एमेले से मिलकर किसी काम का जुगाड़ बैठा लो। मैं गया। उसको अपने गांव का नाम बताकर परिचय दिया। बताया कि मैं कोई भी नौकरी करने को तैयार हूँ। उसने कहा, 'यहीं रहो।' उसी दिन से मैं उसके पास ही रहने लगा। काम कुछ नहीं, न कोई तनखाह। मुझे खाना, कपड़ा और जरूरत की सभी चीजें मिलने लगीं। यह समझ में नहीं आता था कि यह साला मुझ पर इतना मेहरबान क्यों है? कभी-कभी सोचता था कि इस तरह के लोग अपनी बीवियों को छोड़कर कम उमर के लड़कों के पीछे भागते हैं। कहीं यह भी हमारे साथ वही सब न करे। मन-ही-मन तय करता कि कभी ऐसा मौका आया तो साले को बधिया कर दूंगा। मगर यार हरखू, ऐसा मौका कभी आया नहीं।"

"आया भी होगा तो अब तुम बताओगे क्यों?" हँसते हैं हरखनारायन।

"नहीं भाई!" उस नेता के दूसरे ही चक्कर थे। सुनोगे वह सब।"

"नहीं, नहीं, तुम अपनी नौकरी वाली बात बताओ।"

"बताते हैं। तो ऐसे ही उसके यहाँ रहने लगा। मन नहीं लगता था। तभी अपने कस्बे का एक बनिया उस नेता से कोई काम कराने गया। मैं जानता हूँ कस्बे में वह बनिया मुझसे बात करना भी पसंद नहीं करता। वहाँ एमेले साहब को अपने काम के लिए राजी कराने के लिए वह बनिया मेरी खुशामद करने लगा। उसने मुझे खूब खिलाया, पिलाया। रुपये भी दिये। मुझे एमेले से कुछ कहना भी नहीं पड़ा। उस बनिये का काम अपने आप हो गया। उसी के कहने पर एमेले ने काम करा दिया। बनिये ने समझा कि मेरे कहने से ही उसका काम इतनी आसानी से हो गया। उसके बाद इधर के लोग उस एमेले के पास अपना काम लेकर आते तो उससे ज्यादा खुशामद मेरी करते। अब अपने लिए एक काम मेरी समझ में आने लगा। इन आने वालों से अच्छी आमदनी हो सकती है। थोड़ी चाल चलने की जरूरत है। सो मैं खुद भी उन सबों से अलग ले

जाकर सौदा तय करने लगा। अच्छी कमाई होने लगी। लेकिन यह सब थोड़े दिनों में खतम भी हो गया।

एक दिन एमेले साहब ने मुझे बुलाकर बहुत डांटा। उनको मेरी कमाई की बात का पता चल गया था। ट्यूववेल विभाग के वड़े इंजीनियर के पास एक चिट्ठी देकर उन्होंने मुझे भेज दिया। वहां जाकर पता चला कि उन्होंने मेरी नौकरी के लिए सिफारिश किया था। मुझे ट्यूववेल ठीक करने वाले मिस्त्री की ट्रेनिंग देने के लिए चुन लिया गया। साल भर बाद ही मैं मिस्त्री हो गया। गांवों में सरकारी नलकूपों को ठीक करने का काम मिला। वहां आमदनी का जरिया एकदम खुला हुआ था। जब भी रुपये की जरूरत हो, किसी ट्यूववेल में थोड़ी खराबी पैदा कर दो। सैकड़ों किसानों की फसल सूख रही है। चन्दा लगाकर सौ-पचास रुपए मिस्त्री साहब के पास पहुंचा रहे हैं। जिस गांव में जाओ मिस्त्री साहब को खाना, नाश्ता और सलाम मिल रहा है। दही, मछली खाते-खाते नाक में दम हो गया। आमदनी और इज्जत दोनों बढ़ने लगी। लेकिन इस तरह धीरे-धीरे आमदनी से बहुत फर्क पड़ने वाला नहीं था। मेरे मन में एकाएक कुछ कर गुजरने की बात बैठती जा रही थी।

उन्हीं दिनों जिस इलाके का मैं मिस्त्री था, उसी इलाके में सरकारी नलकूपों के सामान का एक स्टोर खुल गया। ओसियर साहब मुझसे बहुत खुश रहते थे। उनको कभी किसी चीज की कमी मैंने नहीं होने दी। इसलिए मुझे ही स्टोर का चार्ज मिल गया। अब सभी ओसियर, छोटे इंजीनियर और बड़े ठेकेदार मुझे जानने लगे। लाखों बोरे सीमेंट, लोहे के पाइप, जालियां, ईंट—दुनिया भर के सामानों का चार्ज मेरे जिम्मे था। मगर मिस्त्रीवाला जमाना नहीं था। मेरी आमदनी कम हो गयी थी। मैं फिर से मिस्त्री बनना चाहता था।

तभी नये ओसियर वर्मा साहब आये। उन्होंने मुझे बताया कि स्टोर का इंचार्ज तो आदमी बड़े भाग्य से बन पाता है। उन्होंने मुझे ठेकेदारों के साथ मिलकर व्यापार करना सिखाया। दो साल में सीमेण्ट, पाइप, और दूसरे फुटकर सामान हम लोगों ने लाखों रुपये के बेच डाले। जिस ट्यूववेल में अस्सी फीट पाइप लगा, उसमें दो सौ फीट की रिपोर्ट ओसियर

ने लिखी। बाकी पाइप ठेकेदार ने बाजार से थोड़े कम भाव पर ले लिया। वह रुपया मेरे और ओसियर साहब के बीच बँट गया। इसी तरह ईंट, सीमेण्ट, लोहा भी हम लोगों ने अन्धाधुन्ध बेचा। जब बात बहुत बढ़ गयी, और कई ट्यूबवेल बैठ गये, नेता लोग शोर करने लगे तो ओसियर साहब ने अपना तबादला करा लिया। मैंने बीमारी का बहाना बनाकर छुट्टी ले ली। मुझे डर था कि मैं घर जाऊँगा तो इन्क्वायरी वाले वहाँ जाकर पकड़ लेंगे। मैं सीधे बम्बई चला गया। साल भर वहाँ मजे करता रहा। अब गाँव आया हूँ। अब नौकरी तो करूँगा नहीं। रुपये काफी हैं। अब कोई बिजनेस करना चाहता हूँ। गाँव में बिजनेस होता नहीं। सो भाई, मैं तो फिर उधर ही जाऊँगा। तुम बताओ, इधर कोई बिजनेस हो सकता है।"

गोपाल की नौकरी, उसकी आमदनी और उसके ठाट-बाट की बात हरखनारायन की समझ में आयी भी और नहीं भी आयी। उसे लग रहा था कि पढ़ना-लिखना, ईमानदार, मेहनती बनना बिल्कुल बेकार है। हरखू को मालूम था कि सरकारी नौकरियों में और पी० डब्ल्यू० डी० में और सिंचाई विभाग में बेईमानी होती है, मगर वह इस तरह अन्धाधुन्ध होती है, यह उसने नहीं सोचा था।

हरखनारायन वकील रात भर अपने को गाली देते रहे। वे अपने को गाँव में सबसे ज्यादा पढ़ा-लिखा और काबिल आदमी मानते थे। यहाँ तक कि वे यह समझते थे कि महात्मा गांधी और डाक्टर अम्बेडकर के आदर्शों पर चलकर एक दिन देश और हरिजन जाति की स्मरणीय सेवा वे करेंगे। कई बार कल्पना लोक में वे अपने को भाषण देते हुए और हजारों श्रोताओं की प्रशंसा पाते हुए देख चुके थे। स्कूल में एक बार वे डाक्टर अम्बेडकर को भाषण करते हुए देख चुके थे। उन्हें कुछ याद तो नहीं है, मगर अम्बेडकर साहब की फोटो रोज देखते हैं तो उन्हें लगता है कि ये ही थे जो उनके स्कूल में आए थे। हरखू ने तब जाना शुरू ही किया था स्कूल। अम्बेडकर साहब के त्यागमय जीवन से प्रेरणा पाकर कब उनकी तरह बनने का संकल्प कर बैठे, हरखनारायन को याद नहीं है।

वकालत में उनके सफल न होने के पीछे उनके आदर्श ही थे, जिनको बेकार मानने के बाद भी छोड़ना वे नहीं चाहते थे। कचहरी का हाल यह है कि कोई अदालत कोरे कानून पर फैसला नहीं करती। वकीलों में होड़ रहती है कि कौन अपने हाकिम को कितने में पटा लेता है। हरखनारायन सोच भी नहीं सकते कि रुपये देकर वे न्याय खरीदेंगे। इसीलिए उनको मालूम रहता है कि उनके मुवक्किल के विरोधी वकील से हाकिम पांच सौ खा चुके हैं। उसी हाकिम की पीठ के पीछे दीवाल पर हाथ उठाये महात्मा गांधी की तस्वीर में कभी-कभी हरखनारायन को आंसू भी दिखायी पड़ते और कभी क्रोध की चिनगारियां छिटकती नजर आतीं। हाकिम फैसला लिखा देते। हरखनारायन ऊपर वाली अदालत के लिए अपने मुवक्किल को उस वकील के पास भेज देते जो हजार में सौदा तय करा दे। खुद अलग हो जाते। धीरे-धीरे उनके पास से मुकदमे हटते जा रहे थे। इधर कोई नौकरी भी नहीं मिलती। मन की उमंगें धीरे-धीरे बुझती जा रही थीं।

आज गोपाल की बातें सुनकर हरखनारायन को न्याय, धर्म, राष्ट्र, गांधी, अम्बेडकर सब झूठे लगने लगे हैं। गोपाल, मोहन बाबू और उनके चाचा, काका कितना फरेब करते हैं। गोपाल गांव का सबसे नालायक लड़का। आज उसके पास पता नहीं कितना रुपया है। बिजनेस करने को कह रहा था। हरखनारायन का पढ़ना-लिखना सब बेकार। क्यों नहीं वे भी ट्यूबवेल के मिस्त्री हो जाते? लेखपाल होते तब भी कोठी बनवा लेते। इस हलके के लेखपाल के मकान में चौबीस कमरे पक्के हैं। उसका बाप फूस के छप्पर में मरा था। बेटा हजार रुपये किराया वसूल करता है।

पहले हरखनारायन सोचते थे वकालत में पैसा कम मिलता है तो क्या? गांधीजी, जवाहरलाल नेहरू, मोतीलाल नेहरू, सर तेजबहादुर सप्रू ये लोग वकील ही तो थे। उन्हीं लोगों के समान वे भी किसी दिन देश की सेवा करेंगे।

आज उनको लेखपाल और गोपाल दोनों अपने से बड़े लग [illegible]
गोपाल सबसे बड़े हैं। उनसे बड़े मोहन बाबू हो [illegible]

सारी रात आंखों में काटकर सवेरे झपकी लेने लगे हैं। कोई हांक लगाता है, 'वकील साहब ! उठिये। सवेरा हुआ।' हरखनारायन आँखें मलते निकलते हैं, "क्या है भाई !"

"बी० डी० ओ० साहब आये हैं।"

"इस वखत ?"

"हां साहब ! आप ही को बुला रहे हैं।"

"कहां बुला रहे हैं ? मैं नहीं जाता-वाता कहीं।"

"पंचाइत घर में। आपको बुला रहे हैं। सब लोग वहीं हैं।"

"सब लोग कौन।"

"अरे बाबा लोग। लेखपाल। मोहन बाबू। सब लोग।"

"तो हम क्यों जाएँ ?"

"आप को सब लोग बुला रहे हैं।"

"क्यों ?"

"कोई सड़क बन रही है।"

"कहां, बन रही है ? कौन बनवा रहा है। मेरा क्या काम है वहां ?" कहते हुए हरखनारायन निकल पड़ते हैं। वहां पहुंचते हैं तो पाते कि सारा गांव जमा है। दिन निकलते ही इतनी भीड़। बी० डी० ओ० कुर्सी पर बैठकर चाय पी रहे हैं। खटिया पर लेखपाल साहब हैं।

"आओ, आओ, वकील साहब।" कई लोग एक साथ कहते हैं।"

कोई और समय होता तो हरखनारायन मौर्य इस बात से बेहद खुश होते कि सारा गांव इकट्ठा होकर वकील साहब की राह देख रहा है। मगर इस समय वे खुश नहीं हुए। उनके सामने उस जमात का हीरो बना बैठा है बी० डी० ओ० जिसके बारे में मशहूर है कि उसने अपने एकाउण्टेण्ट को जहर देकर मार दिया था। मरे हुए एकाउण्टेण्ट के विषय में यह अफवाह फैल गयी थी कि उसने पचासों हजार रुपये का गबन कर लिया था। जब भांडा फूटने को हुआ तो उसने जहर खा लिया। मरे हुए एकाउण्टेण्ट की बेईमानी पर लोग थूकने लगे थे। तभी गांव से आये थे उसके घर के लोग। एकाउण्टेण्ट के बिलखते भाई ने बताया कि बी० डी० ओ० ने ही उसके भाई की जान ले ली है। उसी ने वह रुपया भी खाया

है। बी० डी० ओ० पर मुकदमा भी चला। वह साफ छूट गया। अदालत ने उसे छोड़ दिया। मगर हरखनारायन को उसके मुंह से लगा प्याला चाय का प्याला नहीं, खून का प्याला दिखाई दे रहा था। एकाउण्टेण्ट के खून से भरा हुआ।

इस समय गांव वाले बी० डी० ओ० को ऐसे देख रहे हैं, जैसे कुबेर की ओर देख रहे हों। उन्हें लग रहा था कुबेर अब सोना बरसायेंगे। उन बेचारों को क्या पता यह कुबेर सोना बरसाता नहीं, लूटता है। हरखू जल-भुन जाते हैं। फिर भी चुप रहते हैं।

"वकील साहब! आपको शहर तक जाने में तकलीफ होती है न? अब सरकार ने सोचा है कि···"

"कि मेरे लिए हवाई जहाज दे दे।···" तल्खी से हरखनारायन के मुंह से निकलता है।

"अरे भाई, आप तो मजाक करते हैं। सरकार सड़क बनवा रही है।"

"तो मैं क्या करूं?"

"आप कुछ मत करिये। काम सब गांव वाले करेंगे। आप सिर्फ सहयोग कीजिये।"

"सहयोग और सेवा अफसर और नेता करते हैं। मैं कौन हूं सहयोग करने वाला?"

"आपका गांव शहर से जुड़ जाएगा।" लेखपाल बोलते हैं।

"तुम चुप रहो।" झिड़क देते हैं हरखनारायन।

"हमको क्या है? हम तो बी० डी० ओ० साहब के कहने से आये हैं। आप क्यों नाराज होते हैं।" गिड़गिड़ाता है लेखपाल आंख थूकता हुआ।

"वकील साहब नाराज नहीं हो रहे है भाई। नया खून है। तुम समझते क्यों नहीं? लेखपाल को बी० डी० ओ० समझाते हैं।"

"मुझे क्यों बुलवाया आप लोगों ने?"

"तुम गांव के पढ़े-लिखे आदमी हो। इतना बड़ा काम हो रहा है। तुमसे पूछना जरूरी नहीं है क्या?" मिसिर जी कहते हैं।

"हमसे पूछकर तो कभी कुछ नहीं होता।"

"तुम पैदा कब हुए थे कि हर काम तुमसे पूछकर करें।"

मिसिर जी की झिड़की से हरखू चुप हो जाता है। बी० डी० ओ० बोलते है।

"वकील साहब ! आप साथ चलें। पहले सड़क की पैमाइश करनी है।"

"हां। हां। आप सब जानते समझते हैं।"

"आप काननी आदमी हैं।"

"आप पढ़े-लिखे हैं।"

एक साथ कई आवाजें उभरती हैं। इन आवाजों में हरखनारायन को अपनी चापलूसी कम, मखौल ज्यादा सुनायी पड़ती है। सब लोग एक साथ ही कह उठते हैं। कस्बे की ओर जाने वाली पगडंडी के दोनों ओर लेखपाल की जंजीर फैलने सिमटने लगती है। खड़ी फसल के बीच में निशान लगता जाता है। जिसका खेत पड़ता है उसका दिल बैठ जाता है। मोहन बाबू एक रजिस्टर में सब कुछ दर्ज कर रहे हैं। गोपाल उनके साथ-साथ चल रहे हैं। बाबू लोग आज बेहद खुश हैं।

गेहूं, अरहर, जौ, चने, मटर और गन्ने की खड़ी फसल खेत के उस हिस्से से काटी जा रही है, जो सड़क की हद में आ जाता है। गरीब किसान, जिसके परिवार का आसरा एक खेत ही है, सड़क के नाम पर आधा-तिहाई बरबाद हो रहा है। मोहन बाबू, लेखपाल, बी० डी० ओ०, गोपाल—सब ऐसे चहक रहे हैं, जैसे नयी बनने वाली सड़क पर पहली मोटर उन्हीं की दौड़ेगी। खेत वाले गरीब बेचारे खून के आंसू रो रहे हैं।

हरखनारायन को बी० डी० ओ० बातों में उलझाये रखना चाहते हैं। गांव के पन्दरह वर्ष से लेकर पचासी वर्ष तक के सैकड़ों लोग हाथों में कुदाल खांची लिये जुटे हुए हैं। उनमें से जब किसी के खेत में लेखपाल की जंजीर पड़ती है तो उसका हाथ ढीला हो जाता, चेहरा मलिन हो जाता है। फसल दूसरे मजदूर काटते हैं। वह आदमी पीछे हो जाता है। फिर

ज्यों ही अगले खेत की बारी आती है पहला आदमी दुगुने उत्साह से रस्सी ठीक करने, निशान लगाने और फसल काटने में जुट जाता है।

अपने खेत की फसल कटने पर जितना गहरा दुख उनको हो रहा है उतनी ही खुशी पड़ोसी की फसल कटने पर हो रही है। किसानों के दुख से भरे चेहरे पर घण्टे भर बाद खुशी की लाली के दौड़ने का रहस्य यही है कि दूसरों की फसल भी कट रही है। आज गिरगिटवा मुरझाया हुआ है। हँसता तो है मगर ऐसे जैसे रो रहा है। उसका अपना कोई खेत नहीं है। इसलिए उसको खड़ी फसल के कटने का कोई दुख भी नहीं होना चाहिए। नहीं, उसे कोई दुख नहीं है। मगर वह बार-बार अपनी आँखें पोंछ रहा है जिसे कोई नहीं देखता।

सड़क किधर से जायेगी, कहाँ ज्यादा चौड़ी होगी, कहाँ कम चौड़ी होगी, कहाँ दाहिने घूम जायेगी, कहाँ बायें घूम जायेगी—इन बातों का पता गाँव में किसी को नहीं है। सब बातें लेखपाल के खाते में दर्ज हैं। उस खाते को और नक्शे को समझते हैं लेखपाल जी, बी० डी० ओ० साहब, मोहन बाबू और गोपाल बाबू। जब किसी बाभन ठाकुर का खेत दाहिनी ओर पड़ रहा है तो सड़क बांयी ओर मुड़ जाती है और जब किसी पंच परधान का खेत बांयी ओर पड़ता है तो सड़क दाहिनी ओर मुड़ जाती है। कभी कोई गरीब चिल्लाता है तो उसे नक्शा और डण्डा एक साथ दिखाकर चुप करा दिया जाता है।

"चुप बे गँवार। देखता नहीं, सरकारी हुकुम है। चुनाव सिर पर है। अकाल भी संजोग से पड़ गया बड़े मौके से। जनता की भलाई के लिए सड़क बनाने का काम हो रहा है। गड़बड़ करेगा तो जेल भेज दिया जायेगा।" डाँट देते हैं मोहन बाबू। बेचारा गरीब चुप हो जाता है।

हरखनारायन से यह सब देखा नहीं जा रहा है। वह बिना किसी से कुछ बोले धीरे से वहाँ से चला जाता है। थोड़ी देर बाद हरखनारायन को न पाकर बी० डी० ओ० साहब मोहन बाबू का कन्धा दबाते हैं।

"क्यों भाई! यह चमरकट तो लगता है न खुद कुछ खायेगा न हम लोगों को खाने देगा। क्या उपाय है? उस साले को ठीक करो यार!"

"उपाय है साहब !" अपनी एक आंख दवाते हैं मोहन वावू । "अरे, वह अपने वाप की वात नहीं मानेगा ? उसके वाप को दो टुकड़े डाल देंगे । अगर यह वकील का वच्चा कुछ गड़वड़ करता है तो उसके वाप से ही गवाही दिला देंगे । आप फिकर मत कीजिये । वाप वेटे को आपस में ही न फंसा दिया तो वाभन की औलाद मत कहियेगा ।"

अब दोपहर होने को है । वी० डी० ओ० साहब और लेखपाल को भूख लग आयी है । मोहन वावू और गोपाल को इसकी चिन्ता हो रही है । वी० डी० ओ० खायेगा नहीं तो उनके हिस्से कैसे मोटे होंगे । सभी लोग गांव में लौट आते हैं । गोपाल का प्रस्ताव मान लिया जाता है कि जब तक मुर्गा पककर तैयार हो, एक-एक गिलास दूध और हरे मटर की घुघुनी चल सकती है । चटखारे उड़ने लगते हैं ।

घुघुनी के स्वाद का मजा नहीं ले पा रहे हैं वी० डी० ओ० साहब । उन्हें लगता है कि यह वकील का वच्चा कुछ गड़वड़ जरूर करेगा । मोहन वावू और गोपाल वावू को कोई डर-संकोच नहीं है । वी० डी० ओ० को वे लोग हर तरह से निश्चिन्त रहने को कहते हैं । वी० डी० ओ० कहता है वह वकील कहां चला गया ? उसको फांसना वहुत जरूरी है । आप लोग वात को पूरी गम्भीरता से समझने की कोशिश कीजिये । अंग्रेज जैसा पैदाइशी हाकिम और कोई नहीं हो सकता, मगर इसी वकील कौम ने उसकी कुर्सी हिलाकर रख दी । एक कोने में मोहन और गोपाल को फिर खींच ले जाते हैं वी० डी० ओ० साहब । दोनों को समझाते हैं कि "दो सौ मजदूर आज काम कर रहे हैं । रजिस्टर में तीन सौ का नाम दर्ज होगा । सौ नाम कैसे लिखे जायेंगे, समझाते हैं । जैसे एक नाम मंगरू का है तो फलवारू दूसरा नाम हो जायेगा । जांच तो हमको ही करनी है । इसकी फिकर नहीं । दूसरा काम यह करना है कि जो वच्चे और वूढ़े काम कर रहे हैं उनको आधी मजदूरी मिलेगी । रजिस्टर में उनसे पूरे पर दस्तखत कराये जायेंगे । वीस मजदूर पर एक मेठ रख दीजिये । गांव के जो स्कूली लड़के क्रान्ति की वातें करते हैं उनको धीरे से वुलाकर समझा दीजिये । सौ-पचास का फायदा हो जायेगा । डेढ़ लाख का टेस्ट वर्क है । क्यों वन्दरों की तरह चीं चीं करते हैं । उन सवका नाम मेठ की जगह पर लिख

दीजिये। उनको काम के पास आने भी मत दीजिये। वहाँ आयेंगे तो दुनिया भर का आदर्श बघारेंगे ससुरे। देखो मोहन बाबू, कुछ ऐसा करो कि जब इसमें पड़े ही हैं, तो दो-चार हजार सबका बन जाय, नहीं तो गुनाह बेलज्जत हो जायेगा। हाँ एक बात है जरूर, उस वकील के बच्चे का क्या होगा? पहले यह पता चलाइए कि इस वक्त वह क्या कर रहा है? दूसरा काम यह कीजिये कि उसके घर के सभी औरत-मर्दों का नाम मजदूरों में रख लीजिये, उसके बाप का मेठ में। किसी को बुलाइये मत। एक दिन दो-चार सौ रुपये हाथ में आयेंगे, तो बूढ़े को रोकना उस लौण्डे के वश में नहीं रह जायेगा। लेकिन इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि उस वकील को इन सबके बारे में हवा भी न लगने पाये। नहीं तो वह सब गड़बड़ कर सकता है।"

इतना सब समझाकर बी० डी० ओ० कुछ बेफिकर नजर आ रहे हैं, तब तक खाना तैयार होने की खबर आ जाती है। पेट तो भरा ही है, लेकिन खाने में जब मुर्गा हो तो भरा पेट क्या और खाली पेट क्या?

गोपाल को धीरे से एक ओर बुलाकर बी० डी० ओ० कहते हैं "कुछ और भी है मुर्गे के साथ?"

"मैं समझ गया आपका मतलब साहब। अभी किसी को कस्बा भेजकर मँगा लिया जाता है।"

"तब तो यार बड़ी देर हो जायेगी।"

"अभी हो जाता है।"

"क्या अभी हो जाता है?" पूछते हैं मोहन बाबू।

"बी० डी० ओ० साहब कुछ माल-पानी की बात कर रहे हैं भाई!"

"तो क्या कर रहे हो? लाये हो कुछ बम्बई से?"

"नहीं यार, अभी कस्बे से मँगा लेते हैं।"

"तब तो हो चुका। खाना तैयार है। एक बात है।" बी०डी०ओ० के कान में कहते हैं मोहन बाबू।

"कण्ट्री चलेगा?"

"चलेगा नहीं, दौड़ेगा। मगर वह यहाँ कहाँ मिलेगा?"

"अभी मिलता है। आप हमारे गाँव को समझते क्या हैं?"

मोहन बाबू उठ जाते हैं। थोड़ी देर में ही कपड़े के झोले में लपेटकर दो बोतलें लिये हाजिर हो जाते हैं। मोहन, गोपाल और बी० डी० ओ० तीनों रामजन बाबा की बैठक में जाकर भीतर से दरवाजा बन्द कर लेते हैं। खाना भी वहीं मँगवा लिया जाता है। देर तक जश्न होता रहता है। देशी शराब और मुर्गा और पूड़ी, अचार, दही—कुल मिलाकर शहरी और गँवई दोनों मजे हैं खाने में। बी०डी०ओ० बीच-बीच में हरखनारायन का नाम लेकर खिन्न हो जाता है, कभी दो-चार गालियाँ उछालकर आगे खाने लगता है। गोपाल कुछ ज्यादा चढ़ा जाते हैं। मोहन बाबू बहुत सम्हल कर पी रहे हैं। कभी-कभी वे अपने खद्दर की ओर देखकर मुस्कराते रहते हैं। कभी जोर-जोर से खाने लगते हैं। तीनों बेहद खुश हैं।

खाना-पीना खतम होने पर थोड़ा आराम करके सभी लोग फिर सड़क की ओर चल पड़ते हैं। गोपाल रास्ते से ही लौट आते हैं और घर पहुँचते ही कै करने लगते हैं।

आज हरखनारायन कचहरी नहीं गये। उनका मन नहीं लग रहा है। वे साफ-साफ देख रहे हैं कि बी० डी० ओ० और लेखपाल मिलकर खड़ी फसल काटकर फेंक दे रहे हैं। मगर कोई कुछ कर नहीं सकता, यह बात भी हरखनारायन मौर्य को मालूम है। जिसके पास शिकायत की जा सकती है वे सबके सब लोग पहले से ही बोटी बाँटे हुए हैं। उन लोगों के पास जाने वाले को ही गालियाँ सुननी पड़ती हैं। नपुंसक क्रोध की आँच में झुलसते हुए हरखनारायन गाँव के दूसरी ओर दूर बूढ़े बरगद के नीचे पहुँच जाते हैं। देर तक वहीं बैठे रहते हैं। खाना नहीं खाया है, लेकिन आज भूख नहीं लग रही है। क्या करें? कहाँ जाएँ? उठने को होते हैं कि पेड़ की दूसरी ओर से किसी के सिसक-सिसक कर रोने की आवाज सुनायी पड़ती है। घर से भागा हुआ कोई बच्चा होगा, यही सोचते हुए मोटे बरगद के पीछे जाते हैं। हरखनारायन तो देखकर दंग रह जाते हैं कि गिरगिटवा जार-बेजार रो रहा है। उसकी मिचमिचाती आँखें सूज गयी हैं। गालों पर देर से बहते सूखते हुए आँसुओं की लकीरें साफ-साफ दिखायी दे रही हैं।

हरखनारायन सन्न रह जाते हैं। उनकी समझ में कुछ नहीं आ रहा है। गिरगिटवा तो कभी नहीं रोता। उसका अपना कोई दुख नहीं है। दूसरों के दुख में दुखी होना कोई उससे सीखे। गांव के किसी आदमी के घर कोई दुख कष्ट हो, गिरगिट सबसे पहले हाजिर रहते हैं। लेकिन यह भी सच है कोई आदमी उसके होने न होने को कोई महत्व नहीं देता। उसको हमेशा निरर्थक किन्तु अनिवार्य भीड़ का एक हिस्सा मान लिया जाता है। जहां कहीं कोई बात हो जाय, वहीं गांव के बच्चे और कुत्ते इकट्ठे हो जाते हैं। उसी तरह, उन्हीं में से एक गिरगिटवा भी होता है। गिरगिट की ओर लोगों का ध्यान तब जाता है जब वह नहीं रहता है।

हरखू को देखकर गिरगिट की हिचकियां बंध जाती हैं। वह इसके लिए शायद तैयार नहीं था कि कोई उसे देख लेगा। दोनों हाथों से मुंह ढंककर वह और जोर से रोने लगता है। हरखनारायन कुछ भी न समझते हुए तब तक खड़े रहते हैं जब तक गिरगिट अपने आप चुप नहीं हो जाता। समय का अन्दाज दोनों में से किसी को नहीं रह गया है। बड़ी मुश्किल से रुलाई रोककर गिरगिट ही पहले बोलता है—

"आज तुमने हमारी चोरी पकड़ ली। हमको रोते देख लिया। अच्छा हरखू! बताओ, कभी गिरगिट को रोते देखा था? गिरगिट हँसता रहता है—दुनिया को हँसाने की खातिर। उसके भीतर की रुलाई को अगर कोई देखता है तो यही बूढ़ा बरगद। आज तुमने देख लिया। क्यों किया ऐसा? वकील साहब! क्यों किया?" गिरगिटवा फिर रोने लगता है।

हरखनारायन बड़ी मुश्किल से उसे चुप कराते हैं। उसका कन्धा पकड़कर आंसुओं से भीगा उसका चेहरा धीरे-धीरे अपनी ओर घुमाते हैं। उसकी आंखों में आंखें गड़ाते हुए पूछते हैं—

"अच्छा गिरगिट भाई! तुमको दुनिया जहान में किस बात का दर्द है कि इस तरह छिपकर रोते हो।"

"दर्द क्यों होता है बाबू! आज तो तुम भी रो रहे हो, आंसू भले न निकल रहे हों। एक बात बताऊं, तुम मेरे रोने का कारण न जानो, मैं तुम्हारे रोने का कारण जानता हूं। बताओ दर्द क्यों होता है?"

"मैं यह पूछता हूं कि तुम यह जबान बोल लेते हो, तो गांव-गोंवई

के लोगों जैसे क्यों बोलते हो ? तुम पढ़े-लिखे हो ?"

"मुझसे काले अक्षर से कभी भेंट नहीं। कबीर साहब के सबद कुछ कंठ में हैं। गाँव-गँवई के लोगों के साथ रहता हूँ, इसलिए उनकी ही जबान बोलता हूँ। आप वकील हैं, आप अकेले मिले तो आपसे गांव की जबान में कैसे बोलता भला ? लेकिन आप हमारे सवाल को भुलवा क्यों रहे हैं ?"

"भुलवा तो तुम मेरे सवाल को रहे हो ? तुम्हें क्या तकलीफ है ?"

"कुछ नहीं।"

"तब रोते क्यों हो ?"

"सुख किसे कहते हैं वकील साहब ?"

"तुम फिर मुझे बहका रहे हो।"

"भला वकील को कोई बहका सकता है।"

वही पुराना ठहाका लगाते हैं गिरगिट। अब उनका चेहरा अपने स्वाभाविक रंग में आने लगा है। हरखनारायन चकित हैं और हैरान हैं कि यह कैसा आदमी है ?

"तुम बताओ तुम्हें क्या दुख है ?"

"वही तो पूछ रहा हूँ। सुख जानते हैं क्या होता है ?"

"जहां तक मैं जानता हूँ, हर आदमी का सुख के बारे में अपना-अपना ख्याल होता है।" समझदार मुद्रा ओढ़ते हुए हरखू कहता है।

"अपने पास अपनी कही जाने वाली बहुत-सी चीजों का होना सुख होता है। जिसके पास इस तरह की जितनी अधिक चीजें होती हैं, वह उतना ही सुखी कहा जाता है।"

"तो ?"

"तो कुछ नहीं। मेरे पास अपनी कहने लायक कोई चीज नहीं है।"

"यही है तुम्हारा दुख ?" कुछ व्यंग्य झलक जाता है हरखनारायन के होंठों पर।

"यही हमारा सुख है बाबू। इसलिए हम दुनिया भर के दुखियारों को हँसाते रहते हैं। हमारे पास न कोई सुख है, न कोई दुख।" गिरगिट

एक लम्बी सांस लेता है, जैसे वह एकबारगी हल्का हो आया हो। उसका भारी बोझ उतर गया हो जैसे।

"तब क्यों रोते हो?"

"रोज नहीं रोता बाबू! फिर भी बहुत दिन नहीं बीतने पाते जब इसी बूढ़े बरगद के नीचे आकर रोना पड़ता है। यही बरगद मेरे आंसू देखता है।"

"क्यों रोना पड़ता है? क्यों होता है ऐसा?"

"जब जब किसी भाई का दुःख इतना गहरा हो जाता है कि मेरे मसखरेपन से भी उसके सूखे होठों पर हँसी नहीं खिलती, तब तब मुझे रोना आ जाता है। सबके सामने रो नहीं सकता, इसलिए यहीं आकर चुपके से रो लेता हूँ। बरगद टोकता भी नहीं। चुपचाप सुन लेता है।"

"आज तुमने क्या देखा ऐसा? तुमको तो सड़क के काम में रुपये कमाना चाहिए था। सभी कमा रहे हैं। बच्चे, बूढ़े, जवान सब कमा रहे हैं।"

"मैं रुपये का क्या करूँगा बाबू? जब अपनी औरत अपने पास नहीं रख सका तब लक्ष्मी को किस बूते पर अपने पास रखूँगा?"

"अच्छा तो रो क्यों रहे थे आज?"

"कारण तो तुम भी जानते हो।"

"नहीं तो।"

"तुम्हारी आँखें कह रही हैं कि जानते हो।"

"क्या तुम कहना चाहते हो कि गरीबों की फसल के लिए तुम्हें दुख हो रहा है। मैं तो इस बात पर दुखी हूँ कि बाहर वाले दलालों से बड़े लुटेरे अपने गांव के ही बाबा लोग हैं। सब मिलकर कितना रुपया खा जायेंगे, कोई नहीं जानता।"

"खाने दो। किसान के भरे खेत में पक्षी आते ही रहते हैं। ये दलाल भी वही पक्षी हैं। खाने दो। कहाँ जायेंगे ये खाने के लिए?"

"तब क्यों रोते हो भाई?"

"वह अलग बात है।" कहते-कहते गिरगिटवा का गला फिर भर आता है।

"देखो भाई ! मत बताओ, मगर रोओ मत अब।"

"तुम पढ़े-लिखे आदमी हो। तुम नहीं समझोगे। यह माटी का घाव है।"

"पढ़ा-लिखा बाद में हूं। पहले हलवाहे का लड़का हूं। तुम बात तो बताओ। माटी की बात तो मैं भी समझता हूं।

"बात यह है बाबू कि···अच्छा एक बात बताओ।"

"फिर उल्टा सवाल। ठीक है पूछो। पहले तुम्हीं पूछ लो।"

"तुम्हारे चार बच्चे हों, उनमें एक गूंगा-बहरा हो, तीन चतुर-चालाक हों। गूंगा बच्चा बिना कुछ बोले दिन-रात मेहनत करके पूरे खानदान का पेट भरता रहता हो। एक दिन उसी लड़के की एक बांह कोई काट ले। कैसा लगेगा तुमको ? किसान का खेत उसका गूंगा बेटा होता है। रात-दिन अपनी छाती पर हल-कुदाल की धार सह-सहकर अपने थके-हारे किसान बाप का पेट भरता है यह गूंगा बेटा। उसी बेटे के हाथ-पैर काट रहे हैं ये सड़क बनाने वाले दलाल। एक खेत इधर से काट दिया, एक उधर से काट दिया। गभरू जवान फसल से भरे खेत। रोने का इससे बड़ा कोई कारण हो सकता है बाबू ?"

गिरगिट फिर रोने लगता है। हरखनारायन की उदास आंखें भी गीली हो जाती हैं। दोनों देर तक चुपचाप बैठे रहते हैं। बहुत देर बाद उठकर धीरे-धीरे गांव की ओर चल पड़ते हैं। कोई किसी से बोलता नहीं, किसी की ओर देखता नहीं।

गांव की ओर आते समय कुछ हल्ला-गुल्ला सुन पड़ता है। करीब आने पर दिखायी पड़ता है कि रामजस बाबा के दरवाजे पर भीड़ लगी हुई है। रामजस बाबा बेतरह चिल्ला रहे हैं। गालियां बक रहे हैं। भीड़ उनको चारों ओर से घेरकर खड़ी है। हरखू और गिरगिटवा एक ओर से जगह बनाकर भीड़ के घेरे के भीतर देखते हैं। बीच में खटिया पर गोपाल औंधे मुंह पड़े हैं। पास ही ढेर सारी कै कर दिया है उन्होंने। उनके सिर पर कोई पानी गिरा रहा है। उधर लोग हैं कि उनकी आंखों में सहानुभूति के बदले मजा लेने का भाव झलक रहा है। रामजस बाबा

अन्धाधुन्ध गालियाँ बकते जा रहे हैं। हरखनारायन और गिरगिट पहले तो कुछ नहीं समझ पाते हैं। फिर रामजस बाबा की गालियों से ही उनकी समझ में सारी बातें आ जाती हैं। चीख-चीखकर रोती हुई औरतें और चीख-चीखकर गालियाँ बकते हुए मर्द—दोनों बीच-बीच में अपने असंतोष के कारणों का बखान विस्तार सहित करते चलते हैं। रामजस बाबा बकते जा रहे हैं और अपने क्रोध के कारणों की कहानी विस्तार सहित बताते जा रहे हैं। बीच-बीच में उनके चेहरे पर असहाय क्रोध, घृणा, ग्लानि और दीनता की छायाएँ उभरती जा रही हैं।

"सुनते हो पंचो, ई स्साला हमारे कुल में कलंक बनकर पैदा हो गया है। मुरगा खाया और शराब पीकर आया है। वह म्लेच्छ बी० डी० ओ० साला रच्छ भच्छ खाता है। क्रिस्तान है वह तो। यह साला तो गरग वंस का है। सास्तर में लिखा है—नीचे गरग ऊपर सरग। बीच में सब घास-भूसा। हे पंचो, ई हरामी हमारे धरम करम को माटी में मिला रहा है।"

कहते-कहते रो पड़ते हैं रामजस बाबा। भीड़ में से कोई बढ़कर उनको चुप कराता है। गोजर चौधरी घबराये हुए आते हैं और सीधे गोपाल की खटिया के पास जाकर रुकते हैं, हाथ से उनका माथा छूते हैं और फिर अपना माथा पीट लेते हैं।

"हे भगवान, अब ई जमाना आ गईल। राम, राम।" सोच में डूब जाते हैं गोजर चौधरी।

भीड़ में कुछ कानाफूसी होती है। हरखनारायन पीछे मुड़ते हैं। चमार टोली की एक औरत हाथ नचाकर कह रही है। ई गोजर महरा अपने कपार पीटत हवें जइसे चमर टोली के परपंच ई जनते न होवें।

कुछ लोग हँसते हैं। कुछ लोग झुक-झुककर गोपाल, रामजस बाबा और गोजर चौधरी को देखते रहते हैं। गोजर चौधरी अब रामजस बाबा की ओर मुड़ जाते हैं और उनको समझाते हैं। रामजस बाबा एक बार फिर बिफर पड़ते हैं।

"देखो चौधरी, ई स्साले लौण्डे चार पैसा कमाने लगे हैं तो कैसे-कैसे धरम का नास कर रहे हैं। गरग वंस को रसातल में भेज दिया। अरे

भाई ! मांस मछरी हम भी खाते हैं। हमारे पुरखे भी खाते रहे। लेकिन भाई लहसुन, पियाज कभी चौके में नहीं गया। चौके में बैठकर खस्सी का मांस और जल की मछरी खाने में क्या दोस है ? जैसे पेड़ का फल, खेत की तरकारी वैसे जलसेम है। यह तो सुभ है। साइत पर मछरी देखना सुभ है। गोसांई जी भी कह गए हैं—मीन पीन पाठीन पुराना। मगर ई साला मुरगा खाता है। बताओ गोजर भाई ! मुरगा जैसा म्लेच्छ दुआर पर आ जाय तो हम लोग छूत मानते हैं। ये गुण्डे उसी म्लेच्छ को खा रहे हैं। थू थू। इतने नहीं सरावो पी आया है। नसा पानी हम भी करते हैं, बाप दादे भी करते थे। भंग और ठंढाई शिवजी का परसाद है। बहुत नसाखोर हुए तो मटर बराबर अफीम की गोली ले लिया। दिन भर पड़े रहे। कक्कुआ दादा अफीम के पीछे तबाह हो गए लेकिन अंत तक धरम नहीं छोड़े। सराब नहीं छुआ हाथ से। ई साला चमारों के घर में चुआई हुई सराब पी आया है। इससे तो निरबंस अच्छा है गोजर भाई ! ई गांव अब रसातल में जाई। घर-घर में सराब की भट्ठी चलने लगी।" रामजस बाबा कपार पकड़ कर बैठ जाते।

भीड़ कुछ-कुछ छँटने लगती है। एक जैसी चीज बहुत देर तक लोगों को बांधे नहीं रख सकती। जब तक कुछ नाटकीयता न हो तब तक देर तक कैसे बँधे रहें लोग ? धीरे-धीरे किसी दूसरे तमाशे की तलाश में लोग खिसकने लगे हैं।

फिर एक बार कुछ गरम हो जाता है मामला। धीरे-धीरे गोपाल की आंखें खुलती हैं। वे पानी पीते हैं। फिर कै करते हैं। कुछ लोग बढ़-कर उनकी पीठ सहलाते हैं। देर तक गोपाल भीड़ को देखते रहते हैं। रामजस बाबा पर उनकी घूमती हुई नजर ठहर जाती है। गोपाल उठकर खटिया पर बैठ जाते हैं।

"अबे बुड्ढे, यह क्या भीड़ लगा रखी है तुमने ? नशा क्या होता है, तुम क्या जानो। जाओ भंग छानो। हमको गाली देता है। बाम्बे में तुम्हारा बाप लोग पानी नहीं पीता। बीयर पीता है। दिल्ली जाकर देखो मिनिस्टर लोग क्या पीता है। जरा सा नशा कर लिया तो तमाशा खड़ा कर रहा है। नोट देखकर तो लार चुआ रहा था। लाओ, हमारे

नोट वापस कर दो। हम बाम्बे जाएगा। खूसट गांव में नहीं रहेगा।"

कहते-कहते उठने को होकर गोपाल बाबू फिर लुढ़क जाते हैं। गिर-गिट धीरे से हरखू का हाथ दबाकर वहाँ से हट आता है।

कोई दूसरा मौका होता तो गिरगिट हँसते-हँसते पागल हो जाता लेकिन आज उसके चेहरे की लकीरों में दर्द की गहराई इतनी ज्यादा है कि हँसी वहाँ उभर ही नहीं पा रही है।

साँझ होने को आ रही है। झोंपड़ों से धुएँ की लकीरें ऊपर उठने लगी हैं। जाड़े के साथ मोटी तह जैसे उदासी की भी उतरती आ रही है। जैसे गांव की जिन्दगी को किसी शैतान की मुट्ठी में दबाकर छोड़ दिया गया हो और वह धीरे-धीरे निःस्पन्द होती जा रही हो। कुछ कुत्ते सहमते हुए पूँछ दबाये इधर-उधर रात भर छिपने की जगह तलाश रहे हैं।

हरखू के पैर अपने घर की ओर बढ़ रहे हैं। गिरगिट किधर जाय? घर के नाम पर उसके पास जो चारों ओर से खुली झोंपड़ी है, उधर से जैसे कोई ठेलकर भगा रहा हो। अभी वह झोंपड़ी सामने नहीं पड़ी है। मगर गिरगिट पर उसकी दहशत झपटती आ रही है। वह हरखू के साथ चल नहीं पा रहा है।

एकाएक हरखनारायन ठमक कर रुक जाता है। दोनों का बदन मटमैली रोशनी की धारा में डूब जाता है। अभी रात उतरने में देर है लेकिन सामने से आने वाली रोशनी की धार इतनी मोटी और तीखी है कि अँधेरे की कमी के बावजूद अपनी पहचान बनाने में कामयाब हो जा रही है। तुरत रोशनी बुझ जाती है। पलभर बाद सामने मनीगरी चमाइन का तेरह साल का लड़का खड़ा मुस्करा रहा है। उसे अचरज है कि गिरगिट आज चुप-चुप कैसे चल रहा है। उसकी मिचमिची आँखों में कुतूहल है जो हरखनारायन वकील को पहचानते ही डर में बदल जाता है। हरखू आगे बढ़कर उसके ढीले हाथों में धरी हुई पाँच सेल वाली बड़ी सी टार्च ले लेते हैं। गौर से उलट-पलटकर देखते हैं। जीप की टॉर्च। दाम कम-से-कम चालीस-पचास रुपये होगा। एकदम नयी। इसको कहाँ

से मिल गयी ? उससे पूछते हैं—किसकी वैंटरी है यह ?

वह बेचारा पहले ही से सहमा है। अब और सिटपिटा जाता है। उसकी समझ में नहीं आता कि क्या करे। क्या कहे। माई मना करती थी कि इसको लेकर गाँव में मत निकलना। कोई देखेगा तो छीन लेगा। बाबा लोगों की नजर नहीं पड़नी चाहिए। सन्तू बेचारा क्या करे। ऐसी चीज कल से घर में पड़ी है और वह छू तक नहीं सका। आज माई को फुरसत नहीं है कि इधर-उधर देखे। सन्तू की मेहरारू भी माईके साथ ही लगी है। शहर से बाबू लोग आ गए हैं। महीने में दो ही तीन दिन तो ऐसे मौके आते हैं जब शहर से बाबू लोग संझा के झुटपुटे में आते हैं। धीरे से सन्तू की माई चाचर खोलती है। बाबू लोग अन्दर आ जाते हैं। सन्तू की सतरह साल की मेहरारू और उसकी माई बाबू लोगों की खातिर करने में लग जाती हैं। रात को खूब मजा रहता है। सन्तू को बाहर रहना पड़ता है लेकिन किसी से कुछ बताने की मनाही होती है। माई कहती है कि गाँव में कुछ बताने से बाबू लोग नाराज होंगे। बाबू लोग नाराज हो जायेंगे तो रुपए कौन देगा ? तब तो भूखों मरना पड़ेगा। सन्तू समझदार है। उसका बाप पागल था। न जाने कहाँ मरखप गया। सनीचरी किसी तरह कुटाई-पिसाई करके सन्तू को पालती-पोसती बड़ा कर ले आयी। पारसाल बिवाह कर दिया। अब दोनों सास-पतोहू यह काम करती हैं तो किसी के आगे हाथ फैलाने की नौबत नहीं आती। कुटाई-पिसाई अब नहीं करती सनीचरी। सन्तू सब समझता है। अगर गाँव वाले जान जायेंगे तो बाबू लोगों का आना बन्द हो जाएगा। बाबू लोग नहीं आयेंगे तो तीन परानी खाने बिना मर जायेंगे। फिर कुटौनी-पिसौनी करना पड़ेगा। माई तो वह भी कर लेगी। उसकी मेहरारू कैसे करेगी। चिकने-चिकने हाथ हैं उसके। झकझक देह है। सन्तू उसके मजदूरी करने की कल्पना से सिहर जाता है। ना, वह किसी से कुछ नहीं बताएगा।

आज वैंटरी का लोभ जरूर उससे नहीं छोड़ा गया। लेकर निकल आया। सोचा था कि बाबा लोगों के टोले की ओर नहीं जाएगा। अभी जरा देर बाहर भुकभुका कर वापस रख देगा। निकला ही था कि हरखू

वकील आ गए । वह पूछ रहे हैं कि किसकी बैटरी है । क्या बताए सन्तू । वह बेचारा सिर नीचे झुकाए चुपचाप खड़ा है । हरखू बार-बार पूछ रहे हैं ।

हरखू को रोक कर गिरगिट पूछता है, "बता दो सन्तू । चोरी तो नहीं किया । बैटरी कहाँ मिला ?"

चोरी की बात पर सन्तू आग-बबूला हो जाता है । चोरी करेगा वह ? ई गिरगिटवा उसको चोर बना रहा है । गरजता है सन्तू ।

"ए गिरगिट! बक-बक मत कर । हम चोरी नाहीं करीलें । चोरी बाबा लोग करेलें । राति गोपाल बाबा हमरी घर में आइल रहलें । माई नाहीं रहलीं । माई आइल त ओकरे साथे एक जने और बाबा जी रहलें । उनके देखते गोपाल बाबा के हाथे से बैटरी छूटि गइल, ऊ उठि के भागि गइलें । उहे बैटरी हऽ । माई कहेले अब ई बैटरी लेवे ऊ नाहीं अइहें । ई बैटरी अब हमरे है । सुनलऽ । चोरी के नाहीं हऽ ।"

चीखता है सन्तू । हरखनारायन उसके हाथ में टार्च पकड़ा देते हैं । गिरगिट का चेहरा लटक जाता है । आस-पास एकाध लोग तमाशा देखने के लिए जुट आये हैं । सन्तुआ भागकर घर में घुस जाता है । तमाशा नहीं होता । लोग लौट जाते हैं ।

हरखनारायन जैसे-तैसे अपने ओसारे तक पहुँचकर चारपाई पर बैठ जाते हैं । सोचते हैं कि इस समय दूसरे वकील लोग क्या कर रहे होंगे । अपनी कल्पना की आँखों से वकील हरखनारायन देखते हैं कि शहर के वकील लोग क्लब में, चौराहे पर, सिनेमा में गप्पें लगा रहे होंगे । कोई-कोई कल के लिए केस तैयार कर रहे होंगे । हरखनारायन के पास कल के लिए कोई केस नहीं है । न हो, वे दलाली नहीं करेंगे, वकालत के नाम पर ।

हरखनारायन वकील दुखी हों, इससे पहले ही उनको लगता है कि उनकी खटिया के पास कोई जमीन पर लोट-पोट रहा है । कुछ अजीब-सी गुर्राहट की आवाज आ रही है । अँधेरा है । खटिया के नीचे झुककर देखते ही हरखू पहचान लेते हैं । यह तो गिरगिट है । हरखू को ख्याल ही

नहीं था कि उन्हीं के पीछे आकर गिरगिट जमीन पर बैठ गया था। हरख सन्न रह जाते हैं। कोई दूसरा समय होता तो हरखनारायन यह समझते कि गिरगिट के इस लोट-पोट में भी दुखिया संसार को हँसाने की कोई चाल छिपी हुई है। मगर आज तो सवेरे से हरखनारायन उसे देख रहे हैं। एक गहरी उदासी जो उसके दिल में बरसों से घिरी हुई थी आज जैसे धीरे-धीरे परत-दर-परत उसके चेहरे पर उभरती जा रही थी। हरखू उसकी अकथ पीड़ा को समझने की कोशिश कर रहा था, कुछ कुछ समझ भी रहा था किन्तु इस समय गर्दन कटे बकरे के धड़ की तरह गिरगिट की छटपटाहट से वह एकदम घबरा गया है। उसकी समझ में कुछ नहीं आता। अभी तो यह ठीक-ठीक चल रहा था। तकलीफ तो इसे बहुत थी लेकिन वह मन की पीर थी। मन की पीर चाहे जितनी गहरी हो उससे आदमी शरीर से नहीं तड़पता है।

हरखनारायन को जिस ख्याल ने सबसे पहले छुआ, वह था गिरगिट की मदद करने का। मदद करनी ही चाहिए। गिरगिट के घर में कोई है नहीं। माँ-बाप, पता नहीं कभी थे भी या नहीं। एक बीबी थी जो दान में चली गई। एक पता नहीं कैसा, भाई है उसका जो रिक्शा खींचता है और गिरगिट के झोंपड़े के बराबर झोंपड़ी डालकर रहता है। शाम को ही कच्ची दारू पीकर ढेर हो जाता है। पीकर कभी-कभी बड़बड़ाता है कि गिरगिट का वही वारिस है। न हुआ सगा तो क्या है, भाई तो वही है। हरखनारायन दौड़े हुए उसी भाई के पास जाते हैं। वह पहले से ही बड़बड़ा रहा है। गिरगिट के तड़पने की बात पर ठठाकर हँसने लगता है। "स्याला मरे तो मैं अपना घर बनाऊँ ठीक से। अरे जाओ वकील साहब, कहाँ फेर में पड़े हो। मरने दो। सवेरे फूंक देंगे ले चल कर। हमीं तो वारिस हैं उसके। इस वखत तो पेट में दारू है और जबान पर करेजी का सवाद है। इस वखत तो इनरा गान्ही बुलावें तो भी हम नहीं जा सकता।"

कहता-कहता वह ढेर हो जाता है। हरखू दो-एक और चमारों से कहते हैं जो आकर तमाशबीन की तरह खड़े हो जाते हैं। उनके चेहरों पर दर्द या सहानुभूति की जगह पर हँसी फूट रही है। कुछ औरतें जुट

आयी हैं। वे सब तरह की बातें गिरगिट और दूसरे लोगों की इस तरह की बीमारियों या मौतों के बारे में विस्तार से सुनाने लगी हैं।

बड़ी मुश्किल से हरनू दो-तीन चमारों को तैयार कर पाते हैं। एक खटिया के ऊपर गिरगिट को लिटा दिया जाता है। रस्सी से खटिया के ऊपर एक बांस बांधकर डोली बना लेते हैं। खटिया के दोनों ओर के बांस को दो-दो आदमी कन्धों पर उठा लेते हैं। चल देने के बाद हरन-नारायन सोचते हैं कि इसे लेकर कस्बे में डॉक्टर शर्मा के घर जाना होगा जो कस्बे के दूसरे छोर पर रहते हैं। रास्ते में गिरगिट की छटपटाहट बढ़ती जाती है। हरनू तेज चलने को कहते हैं। सुनकर दूसरे लोग बिगड़ उठते हैं। किसी तरह डाक्टर के घर के सामने पहुँचकर खटिया जमीन पर उतार दी जाती है। हरनारायन वकील जोर-जोर से डॉक्टर साहब को आवाज देते हैं। भीतर से कोई आवाज नहीं आती। काफी देर बाद एक आदमी निकल कर उनको डांटता है।

"क्या चीख रहे हो। भीतर पार्टी हो रही है। बैठो। दो घंटे बाद डाक्टर साहब निकलेंगे तब कहना जो कुछ कहना है।"

हरननारायन कुछ कहें तब तक उनके मुँह पर किवाड़ बन्द हो जाते हैं। अब क्या करें। कोई दूसरा डाक्टर भरोसे का है नहीं। कहां जाएं? क्या करें? रात घिर आई है। सरकारी अस्पताल में इस समय कोई नहीं होगा। डॉक्टर साहब नर्स के साथ शहर में सिनेमा देखने चले गये होंगे। हरनू को याद है साल भर पहले सबेरे-सबेरे ही अस्पताल से भीड़ लग गई थी। वे भी चले आए थे। एक आदमी की लाश पड़ी हुई थी, जिसे नोच-नोच कर कुत्ते खा गए थे। चेहरा इतना नुच गया था कि पहचान में नहीं आ रहा था। हरननारायन वहां से भाग खड़े हुए थे।

इस समय सरकारी अस्पताल की बात सोच कर वही दृश्य उनकी आंखों में तैर गया। गिरगिट को सरकारी अस्पताल में छोड़ देने पर वही होगा उसके साथ भी। गिरगिट के साथ ही हरननारायन के मन में उसी रूप में अपने चेहरे की तस्वीर उभरती है और वे चीखने को होकर रह जाते हैं। गांव से आए हुए चमारों को रोकना कठिन हो रहा है। वे सब जाने की जल्दी में हैं। डॉक्टर की पार्टी अभी खतम नहीं हो

है। हरखनारायन एक-एक को समझाते हैं कि गिरगिटवा की जिन्दगी का सवाल है। वे लोग एक रात नहीं ही सोयेंगे तो क्या बिगड़ जाएगा। कोई सुनने को तैयार नहीं होता। उधर गिरगिटवा की छटपटाहट बढ़ती जा रही है। धीरे-धीरे सभी लौट जाते हैं।

तड़पता हुआ गिरगिट और चेतनाशून्य होता हुआ हरखू—दोनों डॉक्टर शर्मा की हवेली के सामने के अँधेरे में खो जाते हैं। भीतर जोरों की पार्टी चल रही है। उस घर के बाहर—हरखू सोचते हैं—एक जिंदगी का अन्त हो रहा है और भीतर कस्बे के बड़े लोग शराब में तैर रहे हैं। ये क्षण इतने भारी लग रहे हैं कि हरखू जैसे जम से गये हैं। वे समय की एक-एक धड़कन को सुन पा रहे हैं। बीच-बीच में गिरगिटवा की चीख उस धड़कन को बन्द कर देती है। फिर खुद खामोश हो जाती है।

बहुत देर बाद किवाड़ खुलते हैं। एक रेला-सा बाहर निकलता है रंग-बिरंगी पोशाकों का। अभी-अभी जली हुई बरामदे की बत्तियों की रोशनी में जैसे हिलते-डुलते ठोस रंग उभर आये हैं। हरखू दूर से छँटती हुई भीड़ को देखते रहते हैं। वे चाहते हैं कि जल्दी ये लोग जाएं तो डाक्टर से उनकी बात हो। सबके चले जाने के बाद एक बार फिर दरवाजा बन्द हो जाता है। थोड़ी ही देर बाद फिर खुलता है। डॉक्टर शर्मा निकलकर उसी आदमी के साथ आते हैं जो पहले हरख नरायन को डाँटने के लिए आया था। डॉक्टर को देखते ही हरखनारायन हड़बड़ाकर आगे बढ़ते हैं। गुस्से, ग्लानि और पीड़ा से हरखू की आवाज गूंगी हो जाती है। डॉक्टर कड़क कर पूछते हैं, "क्या बात है ?" हरखू कुछ बोलें, इससे पहले ही गिरगिट की चीख सुनकर डॉक्टर शर्मा उधर बढ़ जाते हैं। एकाध क्षण के बाद ही वे हरखू की ओर घूमकर कहते हैं, "कौन है यह ? इसके गार्जियन आप हैं ? इसका बचना मुश्किल है। इसे जिले के अस्पताल में ले जाइए। यह बचेगा नहीं।"

हरखू की समझ जवाब दे रही है, उधर डॉक्टर निर्विकार भाव से अपने बँगले की ओर मुड़ गए हैं। हरखू दौड़कर उनके पीछे लग जाता है। पूछता है कि "उसे क्या हुआ है ? आप दवा क्यों नहीं देते ?"

डॉक्टर कहते हैं, "उसे हाइड्रोफोबिया हुआ है जिसकी ऐसी कोई दवा

नहीं होती जो कारगर हो सके। मुफ्त में डॉक्टर की बदनामी होती है। ले जाइए।"

"यह हाइड्रोफोबिया क्या होता है?"

"पागल कुत्ते के काटने से एक तरह का ज़हर खून में फैल जाता है। आदमी तड़प-तड़प कर और कुत्ते की तरह भूंक-भूंक कर मर जाता है। ले जाओ इसे। सुनते नहीं गुर्रा रहा है कुत्ते की तरह।"

हरखू की जानकारी में गिरगिट को कभी किसी कुत्ते ने नहीं काटा। उसके हाथ में डंडा हमेशा रहता है। एक बात जरूर हरखू को याद हो आई। गिरगिट के झोंपड़े में पानी के लिए जो घड़ा पड़ा रहता है उसमें उसने कई बार कुत्तों को पानी पीते देखा है। एक बार उसने गिरगिट से कहा भी था। हँसकर उसने कहा था कि उन बेचारों के लिए कौन पानी लेकर बैठा रहता है। पीने दो बेचारों को। हम भी तो कुत्ते ही हैं। हम कौन अच्छे हैं उन कुत्तों से कि अपने घड़े से उनको पानी तक न पीने दें।

"कुत्ते का जूठा पानी पीने से भी यह बीमारी हो सकती है डॉक्टर साहब?"

"क्यों नहीं हो सकती है भई! ले जाओ इसे यहां से।"

"कहां ले जाऊं डॉक्टर साहब! आप ही कुछ कीजिए।"

"मैं? मैं क्या कर दूं? उसकी दवा भी बहुत मँहगी है।"

"कोई बात नहीं डॉक्टर साहब! पैसे मैं दूंगा।"

"तुम कौन हो इसके?"

"हूं तो कोई नहीं। कोई कहीं नहीं है इसका।"

"तो इसे जिला अस्पताल भेज दो। छुट्टी पाओ। कहां मरोगे इसके साथ।"

"डॉक्टर साहब! आप ही कुछ कीजिए।" कातर हो उठता है हरखूनारायण।

"ठीक है लाओ ढाई सौ रुपये।"

"इतने रुपये?"

"मैं कहता था न जिला अस्पताल भेज दो।"

कहते-कहते डॉक्टर अपने बँगले में समा गये हैं।

हरखू उसी अँधेरे में खड़ा रह गया है। इतने रुपये कहाँ मिलेंगे ? जिला अस्पाल में जाना ही ठीक रहेगा। लेकिन वहाँ कैसे भेजा जाए ? इस रात में कोई सवारी भी नहीं मिलेगी। वहाँ के डॉक्टर भी शर्मा की तरह पेश आयें तब क्या होगा ? जो भी हो, गिरगिट को इस तरह तड़पता छोड़ देना हरखू से नहीं हो पाएगा। इसके लिए कुछ करना ही होगा। गांव की ओर जाने के अलावा कोई दूसरा उपाय हरखू की समझ में नहीं आ रहा है। गिरगिट को उसी तरह खटिया पर तड़पते छोड़कर हरखू रात के उस सन्नाटे में गांव की ओर लौट पड़ते है। गांव लौटते हुए हरखू के सामने यह साफ नहीं है कि वहाँ रुपये का इन्तजाम हो ही जाएगा। गोपाल, मोहन, साधू सबके पास रुपये हैं। मगर ये लोग दे देंगे, इसका कोई भी भरोसा नहीं। हरखू अपने बाप से माँग कर कुछ नहीं पा सकता। घर के लोग तो पहले ही उस पर नाराज हैं कि वकालत करके वह सारा पैसा खुद ही उड़ा देता है। ऐसी हालत में किससे क्या मदद हो सकती है ? फिर भी गिरगिट के लिए कुछ करना ही है।

हरखू के सोचने का सिलसिला टूटता है जोर-जोर से रोने की आवाज सुनकर। उसे ख्याल आता है कि वह गांव पहुंच गया है। सामने चमरटोली की सनीचरी के घर से ही जोर-जोर से रोने की आवाज आ रही है। अब क्या हो गया ? हरखू तेज-तेज चल कर उसके दरवाजे पर पहुँचते हैं। उसके दरवाजे पर तिल रखने की जगह नहीं है। सारा गाँव फटा पड़ा है। भीड़ को चीरकर बीच में पहुंचकर जो दृश्य देखता है हरखू को उसका अन्दाजा तो शाम को ही हो गया था, जब सनीचरी के लड़के के हाथ में उसने उतनी बड़ी टार्च देखी थी।

सनीचरी, उसकी पतोहू और उसके लड़के के हाथ रस्सों से बँधे हुए हैं। पास ही दो-चार बर्तन हैं। कुछ बोतलें। वही बड़ी सी टार्च। थोड़ी दूर पर पेण्ट कमीज पहने तीन-चार शहरी लड़के सिर झुकाए खड़े हैं। उनके हाथ तो नहीं बँधे हैं मगर उनको देखकर लगता है कि अपराधी वे भी हैं। मोहन बाबू सिर नीचा किए एक ओर हटकर खड़े हैं। खटिया पर

दरोगा बैठकर कुछ लिख रहे हैं। आठ-दस सिपाही मुस्तैदी से खड़े हैं। चौकीदार लाठी लिये एक ओर खड़ा है।

एक बात नयी है। पहले इस तरह के जमावड़े में बाबा लोग खटिया पर बैठते थे। बाकी लोग आसपास खड़े रहते थे। आज गाँव के बाबा लोग खटिया पर नहीं बैठे हैं। बेचैनी सबके चेहरों पर छाई हुई है। सबके साथ आज बाबा लोग भी खड़े हैं। आज सिर्फ दरोगा खटिया पर बैठे हैं। आज अपराधियों की जमात में बाबा लोग भी खड़े हैं।

दरोगा लिखते जा रहे हैं। बीच-बीच में कभी सिपाही से, कभी किसी बाबा जी से और कभी सनीचरी से कुछ पूछते जाते हैं। सनीचरी जोर-जोर से रो रही है। किसी सिपाही की ठोकर पर थोड़ा रुक जाती है। फिर रोने लगती है।

हरखू आये हैं गिरगिटवा की दवा के लिए रुपये का इन्तजाम करने। यहाँ दूसरा बवाल खड़ा है। अब क्या करें। किससे पूछें। इस भीड़-भाड़ से इतनी बात तो साफ हो जाती है कि सनीचरी के घर पर पुलिस ने छापा मारा है और शराब बनाने के जुर्म में वह पकड़ी गयी है। साथ ही उसकी पतोहू भी है, उसका लड़का भी है। मोहन बाबू भी शायद उसी के घर में पकड़े गये हैं, यह बात भी समझ में आती है। मगर ये तीन-चार शहरी लौण्डे क्यों सिर झुकाये खड़े हैं? क्या कस्बे से भी लोग सनी-चरी के घर आते हैं? इसका रोजगार क्या वहाँ तक फैला है। हरखू सोच नहीं पाते।

एक आदमी की बाँह पकड़ कर हरखनारायन एक ओर ले जाते हैं। उससे पूछने से पता चलता है कि पुलिस ने छापा मारकर सनीचरी के घर में इन सब लोगों को गिरफ्तार कर लिया है। अब कागज तैयार हो रहे हैं। शहरी लड़कों के बारे में गाँव के लोगों को कुछ ज्ञान नहीं मालूम हो पा रहा है। दरोगा इन सबको पहचानते हैं। सिपाहियों में से किसी को कहते सुना गया है कि इन लड़कों में से एक किसी अफसर का बेटा है, एक किसी व्यापारी का और एक खुद दरोगा जी का लड़का शायद। दरोगा जी की नजरों का बखान करता हुआ सिपाही फुसफुसाकर कहता है कि अपने लड़के को भी छोड़ा नहीं। सबको मारा है—

से। अब सबका चालान कर रहे हैं। धन्न हैं। धन्न हैं। वह आगे कहता है कि दरोगा जी मारते जा रहे थे और कहते जा रहे थे कि साले तुमको भी यहीं आना था। जानता नहीं अपने बाप को।

अब हरखनारायन की समझ में सभी बातें आ रही हैं। पुलिस की कर्त्तव्यनिष्ठा को उससे ज्यादा और कौन जानता है। सबका बाप तो होता ही है दरोगा ! उसका अपना लड़का भी हुआ तो क्या गजब हो जाएगा ? उसी के बहाने सब लोग छूट जाएँगे। गाँव के बाबा लोगों का भी कुछ नहीं होगा। रात बीतने तक निपट जाएगा।

कुछ न कर पाने की पीड़ा से भरे हुए हरखू के मन में भौं भौं करके भोंकता हुआ गिरगिटवा धीरे-धीरे दम तोड़ रहा है। उधर दरोगा जी का काफिला कस्बे की ओर जा रहा है। गांव के लोग सिवान पर झुंड बाँधकर खड़े रह गये हैं।

रात, लगता है, खतम हो रही है।

३

सब उलट-पलट गया है। गांव कस्बा हो गया है। कस्बा गांव को अपने लच्छन-कुलच्छन सौंपकर शहर हो गया है। शहर अपने लच्छन-कुलच्छन कस्बे को सौंपकर विलाइत हो गया है। हरखनारायन दिल्ली में पन्दरह दिन रहकर आया है। दिल्ली हिन्दुस्तान का हिस्सा है, ऐसा मानना उसी तरह है जिस तरह आदमी को आदमी मानने का संस्कार, यह मानने की आदत कि आदमी जानवर से अच्छा है। हरखनारायन इतने दिनों में इतना कुछ देख आया है कि अपने को दूसरे जनम का आदमी मानने लगा है। वह वही नहीं है जो दिल्ली जाने से पहले था।

गांव में रहते हुए और काला कोट कन्धे पर लटका कर कस्बे में वकालत करते हुए हरखनारायन कस्बे के सबसे आलीशान मकान के रूप में गोपाल का तिमंजिला मकान देखता था। छह महीनों में जैसे जादू के जोर से तैयार हो जाने वाली उस विशाल इमारत की नींव में हरख-नारायन कभी-कभी हजारों किसानों के लूटे हुए खेतों की उदासी देखा करता। कभी उसकी एक-एक ईंट में रक्त की गन्ध से हरखू को मिचली आने लगती। दूसरी तरफ उस घर की ओर देखने वाला हर आदमी, गोपाल के शानदार मकान की तारीफ करता है। मकान हो तो ऐसा हो। क्या पुख्ता मकान बनवाया है। कस्बे की शान बढ़ गयी है इस मकान की वजह से।

कस्बे की दूसरी बड़ी कोठी मोहन बाबू की है जो स्कूल मैनेजरी के धन्धे के साथ मंत्री तिरपाठी के 'खास आदमी' होने का

लगे हैं। बिजली विभाग का एक बड़ा भारी सेन्टर कस्बे में बन गया है। उसके लाइन-इन्स्पेक्टर चोपड़ा और मोहन बाबू का धन बाढ़ के पानी की तरह बढ़ता जा रहा है। जानकार लोगों का कहना है कि तांबे के तारों की जो चोरियां होती हैं उनमें बहुत होशियार चोर की जरूरत होती है। बाहरी आदमी के वश की बात नहीं है कि बिजली के बड़े खम्भे पर चढ़-कर तार काट ले और उसे करेण्ट न लगे। गन्ने को या कच्ची कईन को हाथ में लेकर कभी कोई आदमी उसी से तार छू दे तो तड़पकर मर जाता है। वहीं कई मन तार काटकर गिरा देते हैं, उन्हें कभी कुछ नहीं होता। यह काम जान-जोखिम का है। अनाड़ी आदमी तार को काटना तो दूर, उसे छू भी नहीं सकता। तो कौन इतनी सफाई से मनों तार काट देता है? उस तार का क्या होता है? यह पहेली है। एक बार मोहन की टैक्सी को आर० टी० ओ० ने पकड़ लिया। उसमें कई मन तांबे के तार भरे हुए थे। टैक्सी शहर जा रही थी, रास्ते में आर० टी० ओ० ने पकड़कर चालान कर दिया। मोहन को खबर लगी। वे तिरपाठी के पास गये। उसने टेलीफोन पर वह डाँट पिलायी कि आर० टी० ओ० को छठी का का दूध याद आ गया। टैक्सी तुरन्त छोड़ दी गयी। आर० टी० ओ० का तबादला हो गया। मोहन बाबू की इज्जत और बढ़ गयी।

बिजली विभाग के बड़े हाकिम कस्बे में रहते हैं। उस विभाग के कर्म-चारी तिरपाठी के बंगले में बागवानी करते हैं या मोहन बाबू का दरबार। सुना तो यहाँ तक जाता है कि बिजली विभाग के कई कर्मचारी ऐसे हैं जो जितनी तनख्वाह अपने दफ्तर से पाते हैं, उतनी ही मोहन बाबू से भी महीने में पाते हैं। जो सबसे आला अफसर हैं उनकी तनख्वाह के बराबर रकम तिरपाठी से भी मिलती है। पता नहीं क्या सच है, क्या झूठ? इतनी बात जानता है हरखनारायन, कि कस्बा जो देखते-देखते शहर का रुतबा ले बैठा है, वह जिन तीन बड़ी कोठियों की वजह से है, उनमें से मिनिस्टर तिरपाठी की कोठी को छोड़कर बाकी दोनों उसके अपने ही गांव के पण्डितों की हैं—गोपाल की और मोहन की। कस्बे और इस इलाके में जो कुछ होता है वह इन्हीं तीन कोठियों के भीतर पहले तय कर लिया जाता है। आसपास के इलाकों के लोगों से लेकर जिले, कमिश्नरी और

प्रदेश की राजधानी तक में इस बात की धमक है कि मिनिस्टर तिरपाठी अपने इलाके का बड़ा पावर वाला नेता है। उनके दो बड़े चमचे गोपाल और मोहन हाथी हजम कर जाने की ताकत रखते हैं। चमचेगरी की बात पर हरखनारायन को हँसी आती है। गांव के कुछ लड़के एक दिन कह रहे थे कि वकील साहब आप बात नहीं समझते हैं, ई दोनों चमचा नहीं हैं। बेलचा समझते हैं आप ? एक गांनी कोयला या कंकड़ उठाने वाला औजार जो चमचे की शक्ल का होता है। बांस या काठ की लम्बी मुठिया होती है उसकी। ये दोनों तिरपठिया के चमचा नहीं हैं, उनके बेलचा हैं। चमचागिरी तो छोटे-मोटे लोग करते हैं। ये दोनों उसकी बेलचागिरी करते हैं। बेलचागिरी बड़ा काम है, चमचागिरी छोटा।

इसी बात के साथ हरखनारायन को यह भी याद आता है कि ये ही लड़के जो गँवई गांव के सीधे-सादे बच्चे हैं और जो कस्बे के स्कूल में पढ़ते हैं, हरखनारायन के सामने तिरपाठी का, गोपाल और मोहन का मजाक उड़ाते हैं, उनको गालियां देते हैं। वहां से सीधे उठकर मोहन-गोपाल के पास जाकर गांव भर के लोगों की शिकायतें करते हैं। हरखनारायन की शिकायत सबसे ज्यादा करते हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि उसकी शिकायत उन लोगों को सबसे ज्यादा खुश करती है। मोहन और गोपाल से कभी दो-चार रुपये पाकर ये लड़के किसी को भी घेर कर पीट देते हैं। किसी भी आदमी के खिलाफ नारे लगा देते हैं। जब चाहते हैं कोई दुकान लूट लेते हैं। किसी तरह का चुनाव हो, वोटरों को मारने-पीटने की धमकी देकर तिरपाठी के आदमियों को वोट दिलवा देते हैं। इन लड़कों के नेता हैं मोहन और गोपाल के बेटे जो कम्युनिस्ट कहते हैं अपने को। दोनों के बाप की दौलत ज्यों-ज्यों बढ़ती जा रही है, ये दोनों लोण्डे बाल बढ़ाये, दाढ़ी रखाये, खादी के मोटे कुर्ते-पेंट में कम्युनिस्ट रंग को अपने ऊपर गाढ़ा करते जा रहे हैं। ये दोनों गांव के दूसरे लड़कों के बीच अपने पिता के धन की निन्दा करते हैं। उनको बुर्जुआ कहते हैं। मिनिस्टर तिरपाठी को वर्गशत्रु कहते नहीं थकते हैं दोनों। अपने को मजदूर किसानों का सच्चा साथी और सर्वहारा कहते हैं। यह सब सुनकर गांवों के लड़के नये विचारों की चमक अपनी आंखों में भरकर आपस में बातें करते हुए

हैं, 'श्रीनिवास और आनन्द किशोर कितने ईमानदार हैं। अपने बाप की दौलत का घमण्ड करने की जगह उस दौलत से और अपने बाप से नफ़रत करते हैं। गरीबों की तरह मोटा खद्दर पहनते हैं। किसानों-मजदूरों की गरीबी से नफ़रत नहीं करते हैं।' गांव के कुछ बूढ़े इन दोनों को देवता की तरह मानते हैं। गोपाल और मोहन से चिढ़ने वाले लोग भी इन बच्चों की तारीफ करते नहीं अघाते। ये दोनों बच्चे जुड़वां भाइयों की तरह कन्धे पर झोला लटकाये चमरटोली में बेखटके चले आते हैं। खटिया तरई पर बैठ जाते हैं। उनके घरों में भूजा-चबैना भी खा लेते हैं। मोहन, गोपाल और दूसरे बाबाजी लोग हैं, जो चमाइनों के तलवे चाटते रहने के बावजूद, दिन में उनसे देह नहीं छुआते। उनके घरों के दरवाजों की ओर जाते हुए कनराते हैं। दारू और चिखना रात को खा-पी लें, दिन को छोटी जाति के लोगों से बिना गाली के बात नहीं करते। ये लड़के जाति-पांति का भेद मानते ही नहीं। इंसान-इंसान में कोई फरक ही नहीं मानते।

हरखनारायन गांव के लोगों की बातें सुनता है और लम्बी सांस खींच कर चुप रह जाता है। वह जानता है कि चमारों के घर बैठकर भूजा खाने वाले ये लड़के कनखियों से देखते रहते हैं कि कोई ऊंची जाति वाला उन्हें वहां देख तो नहीं रहा है। कभी कोई देख लेता है तो इनके चेहरों पर इनके बाप-दादा वाली नफरत की परतें चढ़ जाती हैं। ग्रामीण इस बात को न समझ सकें, हरखनारायन खूब अच्छी तरह समझता है कि श्रीनिवास और आनन्द किशोर जो भी करें, उनका लक्ष्य अपने को दूसरों से बड़ा बनाना ही है। उनका काम महीन ढंग से किया जाने वाला व्यापार है। हरखनारायन यह भी जानते हैं कि ये दोनों लड़के तिरपाठी के पांव छूते हैं। घण्टों उसके साथ बैठकर जनता का वोट अपने वश में रखने के तरीकों पर बहस करते हैं। हरखनारायन यह भी जानता है कि जिन हाकिमों से गोपाल और मोहन का काम सीधे या घूस देकर नहीं निकलता, उन हाकिमों को नेतागिरी का डर दिखाकर ये काम करा लेते हैं। श्रीनिवास और आनन्द किशोर के झोले में किसान-मजदूरों के हित का साहित्य रहता है। मार्क्स, लेनिन और माओ की बातें करने वाले

श्रीनिवास और आनन्द किशोर हनुमान जी और दुर्गा जी की मानता मान-कर ही कोई काम करते हैं। काम हो जाने पर उनको परसाद चढ़ाते हैं। हरखनारायन को यह भी मालूम है कि ये दोनों लड़के अपने-अपने बाप की दौलत बढ़ाने का काम जितने महीन ढंग से करते हैं, उतने ही छिपे ढंग से उनका राजनीतिक प्रभाव और तिरपाठी का रुतबा जमाने का काम भी करते हैं। मोहन और गोपाल अपने-अपने लड़कों के कम्युनिस्ट हो जाने पर ऊपर-ऊपर बहुत दुखी रहते हैं। पब्लिक के सामने उनको गालियाँ देते हैं, किन्तु अपने बेटों को मुँह माँगा रुपया देते रहते हैं। दोनों लड़कों के पास नये-नये स्कूटर हैं।

श्रीनिवास और आनन्द किशोर दोनों स्कूटर पर चढ़कर गाँवों की ओर निकल गये। तीन-चार कोस दूर एक गाँव के चमारों और मुसहरों को जुटाकर सभा करने लगे। उनको किसान-मजदूर के अधिकारों और सबकी बराबरी और वर्ग-शत्रुओं की बातें बताने लगे। एक जवान मुसहर उठा। बड़ी विनय से उसने पूछा—"सरकार, कम्युनिस्ट माने का होत है ?"

"क्यों ! सब लोगों को जो बराबर माने, वह कम्युनिस्ट होता है।"

"तो सरकार सब लोग बरब्बर कैसे हो सकते हैं ?"

"क्यों नहीं हो सकते ?"

"कैसे हो सकते हैं। अब आपै हैं। इत्ती बड़ी हवेली। इतनी गाड़ियाँ। इत्ता धन। हम आपके बरब्बर कैसे हो सकते हैं ?"

"मेरे, बाप बुर्जुआ हैं। मैं सर्वहारा हूँ। जब मेरे पास धन होगा, तो उसको अकेले अपने पास नहीं रखूँगा। सबको बराबर लाभ उठाने का मौका दूँगा। सबको बाँट दूँगा।"

"तो सरकार ई काम कइसे होई ?"

"अरे तुम तो हुज्जत करते हो। होगा क्यों नहीं ?"

"अच्छा सरकार, मान लेई कि कौनो चीज आपके पास दुई ठो है। हमारे पास एकौ नाही है। तब आप एक ठो चीज हमके दे दिहल जाई ?"

"क्यों नहीं। बिल्कुल देंगे।"

"तब तो सरकार आप धन्न हैं, धन्न हैं।"

धन्न-वन्न कहता हुआ वह मुस्टण्ड अपने दो-तीन साथियों के साथ आगे बढ़ा और खींचखाँच कर स्कूटर का एक पहिया निकालने लगा। दोनों सर्वहारा बहुत बिगड़े। गाँववाले भी हा! हा! करने लगे। तिरपाठी जी, मोहन बाबू और गोपाल बाबू का डर दिखाने लगे। चीख-पुकार मच गयी। उधर वे बिना किसी की परवाह किए स्कूटर का पहिया अलग करते रहे। श्रीनिवास और आनन्द किशोर चीखते-चिल्लाते रहे। स्कूटर का अंजर-पंजर ढीला हो गया। दोनों सर्वहारा नेता गालियाँ बकते हुए पैदल कस्बे की ओर चल पड़े। वहाँ जाकर खूब शोर-शराबा किया और उस गाँव की गुण्डागर्दी खतम करने के लिए दरोगा को भेजा। दरोगा आये तो तीन-चार मुसहरों ने कहा कि सरकार उन दोनों जने तो सब चीज को सब लोगन में बरब्बर-बरब्बर बाँटते रहे। ई गाड़ी में दू ठो पहिया रहा। हम लोगन के पास एक्को नाहीं रहा। हम लोग एक ठो माँगते रहे। ई बात पर ऊ लोग नाराज हो गए।

दरोगा ने उन सब मुसहरों की बड़ी पिटाई की। उन्हीं सबको बैल-गाड़ी में जोतकर उस पर स्कूटर के पुर्जे रखाकर कस्बे में ले आये। स्कूटर मरम्मत के लिए दे दिया गया। मुसहरों को थाने में बन्द कर दिया गया। अभी तक वे छोड़े नहीं गए हैं। आज तक किसी-न-किसी जुर्म में उन सबको हमेशा हवालात में ही रखा जा रहा है। कभी मुकदमा चल जाता है। कभी किसी डाके में उनकी पहचान हो जाती है, कभी किसी चोरी में। एक बचपने की सजा शायद उनको जिन्दगी भर भुगतनी पड़े। जो भी हो, हरखनारायन उन मुसहरों के साहस के कायल होकर रह गए हैं।

हरखनारायन के दर्द के छोर चारों ओर फैले हैं और उनकी जड़ें बहुत गहरी हैं। दिल्ली में पन्द्रह दिन रहकर आने के बाद उन्होंने जिन्दगी को एक दूसरे सिरे से देखना चाहा था। वे ईमान और सच्चाई का अंजाम देख चुके थे और चाहते थे कि वे भी दूसरों की तरह जी सकें। खुलकर खेल सकें। लेकिन उनका मन बड़ा कच्चा है। उनकी दया-माया हमेशा उन्हीं के खिलाफ जाती है। इधर एक हफ्ते से उनकी जिन्दगी एक

ऐसी धुरी पर घूम रही है जिसकी स्वप्न में भी आशा नहीं थी। जब वे पहली बार शहर गए थे, वकालत पढ़ने और देश-काल देखने का मौका मिला था, रूप, सौन्दर्य, यौवन और प्यार के चक्कर से उनका प्रथम परिचय हुआ था, तभी बचपन की अपनी बीवी को छोड़ने का संकल्प उन्होंने किया था। तीन-चार बरस की अवस्था में हुई इस शादी की बात वे बिल्कुल भूल जाना चाहते थे। यह कहना ज्यादा सच होगा कि भूल चुके थे। दूसरी शादी के लिए कभी उन्होंने सोचा तक नहीं। एक कल्पना उनके मन में उठती कि वे बहुत बड़े वकील बन जायेंगे। खूब दौलत होगी और तब तक जात-पांत का बन्धन कुछ शिथिल होगा तो किसी ऊँची जाति की लड़की से शादी करेंगे। अब तो इस ख्याल से भी उन्हें डर लगता है। यह बात उनके सामने साफ होती जा रही है कि खूब दौलत कमाने के लिए जो कोशिश की जानी चाहिए वह उनके वश की बात नहीं है। गाँव देहात का हाल और बदतर होता जा रहा है। बड़े लोग आपस में ही एक-दूसरे के घर खाने-पीने में परहेज करते हैं। रात को चमाइन की भट्ठी पर दारू के साथ कलिया का चिखना क्यों न उड़ायें —दिन में अपनी जाति के अहंकार के नशे में चूर रहते हैं। इनके घरों की लड़कियां चमरटोली के जवानों से खिड़की के रास्ते आँखमिचौनी खेलें, मगर कोई सोच भी नहीं सकता कि किसी चमार के लड़के से अपनी लड़की की शादी की बात की वे कल्पना कर सकते हैं। हरखनारायन अपनी पुरानी कल्पना से भी डर जाते हैं।

यह अक्सर एक विचित्र करुणाजनक स्थिति में सामने आ गया है। उपधिया के डर के मारे सारा जवार थर-थर काँपता था। उनके इक-लौते बेटे कोमल उपधिया वकालत पढ़कर आये तो खानदान के पुराने रोब में चार चांद लग गए। कस्बे में नयी कोठी बन गयी। मोटर आ गयी। कोमल उपधिया का रुतबा नए सिरे से बुलन्द होने लगा। हरख-नारायन तब विद्यार्थी थे। दूसरे लड़कों के साथ उपधिया जी की कोठी को देखने बार-बार जाते। चारदीवारी, फूल-पौधे, कुत्ते सब कुछ वे लड़के देर तक देखा करते। हरखनारायन के आकर्षण के मूल में थी उपधिया वकील की बहन किशोरी। उस इलाके की पहली लड़की थी वह, जो

साइकिल पर चढ़ती थी। सुन्दर-सी फ्राक पहने किशोरी अपनी कोठी के हाते में साइकिल नचाती। कभी बाहर निकल जाती सड़क पर। कभी तीर की तरह गांवों की ओर चली जाती। गाँव के लोग—अधेड़, मर्द, औरतें—अचरज से मुंह फाड़े देखते रह जाते। उनमें कुछ के मन में कुतूहल होता। कुछ को अच्छा लगता। कुछ ऐसे भी थे जो लाज से गड़ जाते। बूढ़ी औरतें छाती पीटने लगतीं। कहतीं, अब घोर कलियुग आ गया है। उपधिया बाबा का लड़का वकील हो गया है। कस्बे में कोठी बन गयी है, तो जमाने को सर पर उठा लिया है उन्होंने। भला ऐसी जवान बेटी को कोई इस तरह सरकस की लड़कियों की तरह नचाता है। मेले में सरकस आता है। गाँव भर के लोग देखने जाते हैं। यह बूढ़ी औरतें वहां भी यही फसाद करती हैं। सरकस देखकर निकलती हैं तो मोटी-मोटी जांघों वाली और बड़ी-बड़ी छातियों वाली उन्हीं लड़कियों की बातें करती हैं। उन्हीं को कोसती हैं कि कैसे बित्ते भर की फतुही पहन कर और चार अंगुल का छातीकस बांधकर वे हजार मरदों के बीच में यहां से वहां, इस झूले से उस झूले पर उछलती हैं। तार पर साइकिल चलाती हैं। मर्दों के हाथ में हाथ डालकर मचकती हैं। लोग देख-देखकर हँसते हैं। जब उपधिया की लड़की किशोरी की तुलना ये औरतें उन सरकस-वालियों से करती हैं तो सरकसवालियां ही उनको भली लगती हैं। इनकी समझ में यह बात घर कर गयी है कि सरकस वाली तो सरकस वाली हैं। उनको शादी-ब्याह, घर-गृहस्थी, लाज-शरम से क्या मतलब? इस-लिए वे जो चाहें सो करें। उपधिया जी को यह क्या हो गया है? उनको तो इस लड़की को किसी भले घर में ब्याहना है। तब चूल्हे-चौके, सिलाई-बिनाई का गुन सिखाना चाहिए। साइकिल चलाती घूमेगी तो धरम-करम कैसे चलेगा? ये बड़े लोग जो न करें।

हरखनारायन उन दिनों ऊँच-नीच नहीं समझता था। बूढ़े-बूढ़ियों की इस तरह की बातों से चिढ़ हो आती उसे। चिढ़ तो होती, लेकिन किशोरी का गांव में साइकिल चलाना हरखनारायन को भी उचित से कुछ हटकर ही लगता। यह दूसरी बात है कि वह कभी कुछ कहता नहीं। एक बार कहना चाहा था और बहुत कुछ कहना चाहा था, मगर उस

बार भी चुप लगा गया । रोज की तरह उस दिन भी गाँव के बहुत से लड़के किशोरी का साइकिल चलाना देख रहे थे । वह बार-बार उन्हीं के पास से साइकिल को खूब तेजी से भगाते हुए ले जाती । थोड़ी दूर जाकर घूमती और फिर लड़कों को दरेरा देती निकल जाती । लड़के बाल-बराबर बच पाते । एकाध तो टक्कर पीछे निकल गए, लेकिन एक लड़का आगे बढ़ आया और अबकी ज्योंही साइकिल उसके सामने से निकली, उसने पीछे वाले मडगार्ड पर अपनी उँगली रख दी । उँगली तुरन्त हट भी गई । इधर धड़ाक से साइकिल को ब्रेक लगाकर किशोरी ने रोक दिया । लपककर साइकिल को एक ओर झुका दिया और घूमकर उस बच्चे के गाल पर एक भरपूर थप्पड़ जड़ दिया । बच्चा ऐसा अचकचा गया कि रोना भी भूल गया । उसके गाल पर पाँचों उँगलियाँ लाल-लाल उभर आयीं । आँखों से बड़ी-बड़ी बूँदें टप-टप चू पड़ीं । हरखनारायन दूर था आकर बच्चे के आँसू पोंछते हुए उसे न जाने क्यों ऐसा लगा कि यह थप्पड़ उसी के गाल पर पड़ा है । क्रोध का एक ज्वार उसके मन में उमड़ आया, कुछ कहा नहीं उसने । मन-ही-मन उसने किशोरी को बड़ी-बड़ी गालियाँ दीं और अनेक ऐसी स्थितियों की कल्पना कर डाली जब वह किशोरी से और उसके भाई वकील से इस अपमान का बदला ले रहा है । वे लोग गिड़गिड़ा रहे हैं और बदले की भावना से भरा हरखू दानवी हँसी हँस रहा है । किशोरी को अपमानित करने के लिए उस समय हरखनारायन कोई भी कीमत चुकाने को तैयार हो जाता । बाद में अपनी बेवकूफी पर उसे हँसी आती थी—आज उसी किशोरी को अपमानित देखकर हरखनारायन की करुणा का ओरछोर नहीं है ।

उपधिया जी के परिवार से हरखनारायन को कोई लगाव कभी नहीं था । बड़े उपधिया जी के मरने पर भी वह नहीं गया क्योंकि कई गाँवों के लोग जुट गए थे । उसके बाद शहर पढ़ने चला गया । किशोरी की शादी हो गयी । वह अपने घर चली गयी । किसी ने उसे बताया, किशोरी की शादी बहुत बड़े घर में हुई थी । दूल्हा मिलिटरी में बड़ा अफसर है । उपधिया ने बड़ा दहेज दिया था । बहुत अच्छी शादी हुई थी । इस घटना के बाद कभी हरखनारायन को इस बात का मौका नहीं लगा कि वह

साइकिल पर चढ़ती थी। सुन्दर-सी फ्राक पहने किशोरी अपनी कोठी के हाते में साइकिल नचाती। कभी बाहर निकल जाती सड़क पर। कभी तीर की तरह गांवों की ओर चली जाती। गाँव के लोग—अधेड़, मर्द, औरतें—अचरज से मुंह फाड़े देखते रह जाते। उनमें कुछ के मन में कुतूहल होता। कुछ को अच्छा लगता। कुछ ऐसे भी थे जो लाज से गड़ जाते। बूढ़ी औरतें छाती पीटने लगतीं। कहतीं, अब घोर कलियुग आ गया है। उपधिया बाबा का लड़का वकील हो गया है। कस्बे में कोठी बन गयी है, तो जमाने को सर पर उठा लिया है उन्होंने। भला ऐसी जवान बेटी को कोई इस तरह सरकस की लड़कियों की तरह नचाता है। मेले में सरकस आता है। गाँव भर के लोग देखने जाते हैं। यह बूढ़ी औरतें वहां भी यही फसाद करती हैं। सरकस देखकर निकलती हैं तो मोटी-मोटी जांघों वाली और बड़ी-बड़ी छातियों वाली उन्हीं लड़कियों की बातें करती हैं। उन्हीं को कोसती हैं कि कैसे बित्ते भर की फतुही पहन कर और चार अंगुल का छातीकस बांधकर वे हजार मरदों के बीच में यहां से वहां, इस झूले से उस झूले पर उछलती हैं। तार पर साइकिल चलाती हैं। मर्दों के हाथ में हाथ डालकर मचकती हैं। लोग देख-देखकर हँसते हैं। जब उपधिया की लड़की किशोरी की तुलना ये औरतें उन सरकस-वालियों से करती हैं तो सरकसवालियां ही उनको भली लगती हैं। इनकी समझ में यह बात घर कर गयी है कि सरकस वाली तो सरकस वाली हैं। उनको शादी-व्याह, घर-गृहस्थी, लाज-शरम से क्या मतलब? इस-लिए वे जो चाहें सो करें। उपधिया जी को यह क्या हो गया है? उनको तो इस लड़की को किसी भले घर में ब्याहना है। तब चूल्हे-चौके, सिलाई-बिनाई का गुन सिखाना चाहिए। साइकिल चलाती घूमेगी तो घरम-करम कैसे चलेगा? ये बड़े लोग जो न करें।

हरखनारायन उन दिनों ऊँच-नीच नहीं समझता था। बूढ़े-बूढ़ियों की इस तरह की बातों से चिढ़ हो आती उसे। चिढ़ तो होती, लेकिन किशोरी का गांव में साइकिल चलाना हरखनारायन को भी उचित से कुछ हटकर ही लगता। यह दूसरी बात है कि वह कभी कुछ कहता नहीं। एक बार कहना चाहा था और बहुत कुछ कहना चाहा था, मगर उस

बार भी चुप लगा गया। रोज की तरह उस दिन भी गाँव के बहुत से लड़के किशोरी का साइकिल चलाना देख रहे थे। वह बार-बार उन्हीं के पास से साइकिल को खूब तेजी से भगाते हुए ले जाती। थोड़ी दूर जाकर घूमती और फिर लड़कों को दरेरा देती निकल जाती। लड़के बाल बराबर बच पाते। एकाध तो डरकर पीछे खिसक गए, लेकिन एक लड़का आगे बढ़ आया और अबकी ज्योंही साइकिल उसके सामने से निकली, उसने पीछे वाले मडगाड पर अपनी उँगली रख दी। उँगली तुरन्त हट भी गई। उधर धड़ाक से साइकिल को ब्रेक लगाकर किशोरी ने रोक दिया। झटककर साइकिल को एक ओर लुढ़का दिया और घूमकर उस बच्चे के गाल पर एक भरपूर थप्पड़ जड़ दिया। बच्चा ऐसा अकचका गया कि रोना भी भूल गया। उसके गाल पर पाँचों उँगलियाँ लाल-लाल उभर आयीं। आँखों से बड़ी-बड़ी बूँदें टप-टप चू पड़ीं। हरखनारायन दूर था आकर बच्चे के आँसू पोंछते हुए उसे न जाने क्यों ऐसा लगा कि यह थप्पड़ उसी के गाल पर पड़ा है। क्रोध का एक ज्वार उसके रक्त में उमड़ आया, कुछ कहा नहीं उसने। मन-ही-मन उसने किशोरी को बड़ी-बड़ी गालियाँ दीं और अनेक ऐसी स्थितियों की कल्पना कर डाली जब वह किशोरी से और उसके भाई वकील से इस अपमान का बदला ले रहा है। वे लोग गिड़गिड़ा रहे हैं और बदले की भावना से भरा हरखू दानवी हँसी हँस रहा है। किशोरी को अपमानित करने के लिए उस समय हरख-नारायन कोई भी कीमत चुकाने को तैयार हो जाता। बाद में अपनी बेवकूफी पर उसे हँसी आती थी—आज उसी किशोरी को अपमानित देखकर हरखनारायन की करुणा का ओरछोर नहीं है।

उपधिया जी के परिवार से हरखनारायन को कोई लगाव कभी नहीं था। बड़े उपधिया जी के मरने पर भी वह नहीं गया जबकि कई गाँवों के लोग जुट गए थे। उसके बाद शहर पढ़ने चला गया। किशोरी की शादी हो गयी। वह अपने घर चली गयी। किसी ने उसे बताया, किशोरी की शादी बहुत बड़े घर में हुई थी। दूल्हा मिलिटरी में बड़ा अफसर है। उपधिया ने बड़ा दहेज दिया था। बहुत अच्छी शादी हुई थी। इस सूचना के बाद कभी हरखनारायन को इस बात का मौका नहीं लगा कि वह

उपधिया-परिवार के बारे में या किशोरी के बारे में सोचता। वकालत करने लगा, तब से कभी उपधिया वकील से दुआ-सलाम हो जाती। वह भी भरसक हरखनारायन बचाने की कोशिश करता। उसे उपधिया की शकल से नफरत थी।

एक दिन कचहरी में बड़ा हल्ला हुआ उपधिया के नाम का। उनके घर के पास एक तहसीलदार रहते थे, जिनकी जवान बेटी के साथ उपधिया पकड़ लिये गये। हल्ला इस बात को लेकर उतना नहीं था, जितना लड़की की हिम्मत को लेकर था। उपधिया की कोठरी में लड़के के आने के थोड़ी देर बाद ही तहसीलदार हाथ में जूता लिये हाँफते हुए आ गए थे। गालियाँ देते हुए दरवाजा खुलवाने के बाद ज्यों ही वे अपनी लड़की के ऊपर जूता चलाने को हुए कि लड़की उलट कर खड़ी हो गयी। जोर से डाँटा उसने तहसीलदार को, 'खबरदार जो हाथ उठाया। चुपचाप चले जाओ, नहीं तो इसी दम कस्बे में चिल्लाकर कहूँगी कि मेरे भाई को पढ़ने के बहाने शहर भेज कर अपनी पतोहू के साथ रंगरेलियाँ मनाते हो।' मजे-ले-लेकर वकील लोग एक-दूसरे से कहते थे, 'इतना सुनना था कि तहसीलदार बेचारा नीचा सिर किए चुपचाप लौट गया।' उसके बाद देर तक तहसीलदार पर, उसकी बेटी पर, उसकी पतोहू पर, उपधिया पर और जमाने पर तरह-तरह की बातें करते हुए लोग अपनी-अपनी भड़ांस निकालते रहे।

दूसरे दिन फिर एक घटना हुई जिसमें उपधिया का नाम आया। सुना गया कि उपधिया की बहन किशोरी को उसके पति ने घर से निकाल दिया है। वह अपने भाई के पास आयी। भाई ने सबकुछ सुना और यह जाना कि किशोरी के पेट में बच्चा है जिसे किसी और का कहकर उसके पति ने उसे घर से निकाल दिया है, तो बहन को घर में घुसने से रोक दिया। वह रोती-चीखती रही, पांव पकड़ती रही, किसी बात का कोई असर उपधिया पर नहीं पड़ा। रोना-चीखना सुनकर राह चलते लोग जुट गए। उनके पूछने पर, 'क्या बात है, औरत क्यों रो रही है' उपधिया ने कह दिया, 'पता नहीं कौन है। कहाँ से आयी है। शायद पागल है। अपने को मेरी बहन कह रही है। मेरी कोई बहन नहीं है।' कहकर वकील साहब

आये। कुछ सोचकर वे पास की दुकान में चले गये। एक कप चाय लेकर देर तक बैठे रहे। दिन डूब गया। लोगों ने अर्द्धनग्न पगली की देह का रस भोगने वाले दर्शकों की भीड़ कुछ हल्की हुई। हृदयनारायण उठे। दुकान-दार को चाय के पैसे दिये। अपनी उमड़ती हुई भावनाओं पर काबू रखते हुए उन्होंने पहली बार इस सम्बन्ध में मुँह खोला। उस चाय वाले से उन्होंने बताया कि वह पगली उन्हीं के गाँव की है; उसको वे उसके घर ले जाना चाहते हैं। वह अधनंगी है। उसका बदन ढँकने को कोई पुराना कपड़ा दूकानदार दे दे तो हृदयनारायण उसका बदन ढँक कर उसे रिक्शे पर बिठा कर उसके घर पहुँचा देंगे। चाय वाले की समझ में बात आ गयी या उसने एक वकील साहब को खुश करने की नीयत से अपनी एक पुरानी धोती दे दी। हृदयनारायण ने पगली के बदन के नंगे हिस्सों को फटी मैली धोती से ढँक दिया। बच्चे को उठाकर उसके पैरों के पास रिक्शे में लिटाया। खुद दूसरे रिक्शे पर बैठ कर उसके पीछे-पीछे चले। कुछ कुतूहल और कुछ काले कोट वाले वकील साहब के अदब में रिक्शे वालों ने चलना शुरू किया, लेकिन कहाँ जाएँ? हृदयनारायण के मन में किसी जगह का ख्याल तो आया ही नहीं था। गाँव ले जाने की बात तो चाय वाले से वे झूठमूठ में कह गये थे। उनके अवचेतन में शायद किशोरी की गदराई देह के रस की कोशिश काम कर रही थी। लेकिन कहाँ ले जाएँ? तब तक दो-चार पैडिल मारने के बाद रिक्शे वालों ने एक साथ ही सवाल किया—'कहाँ चलें वकील साहब?'

जैसे किसी दूसरे आदमी ने उनके भीतर से उनकी मर्जी के बिना ही जवाब दे दिया। हरिजन अफसर के यहाँ।...रिक्शे वाले खुद भी हरिजन थे और हरिजन कल्याण अधिकारी के आफिस को जानते थे। उधर ही बढ़ चले।

यह कस्बा जिले का हेडक्वार्टर नहीं है। तहसील की कचहरी है। यहाँ एक मुंसिफ रहते हैं। एक रेवेन्यू अफसर। एक जूडीशियल मैजिस्ट्रेट एक परगना अधिकारी। एक तहसीलदार। कुछ नायब तहसीलदार। थाना है और उसके अहलकार हैं। इसी की बदौलत डेढ़ सौ वकीलों की रोजी-रोटी कांखते-कराहते चलती है। हरिजन कल्याण अधिकारी का

उठते थे। किशोरी की नंगी जवान देह हजार इन्द्रधनुपी रंगों में हरखू की कल्पना की आँखों के आगे नाचा करती थी। वे तड़पते रह जाते थे। आज वे ही हरखू हैं···नहीं नहीं···हरखू नहीं···हरखनारायन एडवोकेट हैं। एक विशिष्ट नागरिक, कानून की नजरों में वे किसी से छोटे नहीं। उधर किशोरी की गदराई हुई पुष्ट देह···नंगी···उनके लिए खुली पड़ी है। जिस समाज के डर के मारे वे किशोरी की देह को पाने की कल्पना करने से भी डरते थे, उस भयानक समाज ने आज किशोरी को पहचानने से साफ इनकार कर दिया है। अब किशोरी को हरखनारायन चाहे जिस रूप में ले लें, जहाँ रखें, उसके साथ जो चाहे करें···कोई कुछ कहने वाला नहीं है। बिजली की तरह झटका देकर गिराती हुई निकल जाने वाली किशोरी आज कोई विरोध नहीं करेगी। आज वह सड़क की भिखारिन है। एक रोटी, एक वस्त्र, एक हाथ जमीन, किसी भी कीमत पर उसे चाहिए···चाहे जो दे दे, जिस रूप में दे दे, जिस कीमत पर दे दे। उसे इस तरह का आश्रय देकर हरखनारायन आज किशोरी पर सबसे बड़ा उपकार करेंगे। मानवता की पुकार पर कुछ महान कार्य करेंगे और अपनी वह आकांक्षा पूरी करेंगे जो उनके जीवन की धुरी बनी रही है। आज उस सबका अवसर अनायास हाथ लगा है।

उत्साह में भरकर उठ पड़ने को हुए कि एकाएक प्रतिक्रिया विहीन किशोरी की उजड़ी आँखें उनकी आँखों में खिंच आयीं। उन बड़ी-बड़ी शून्य आँखों की भयावहता हरखू के मस्तिष्क में ऐसे चक्कर उठाने लगी कि वे वहीं के वहीं बैठ गये। देर तक बैठे रहे। बार एसोसियेशन का चपरासी जब उनके कन्धे पकड़कर झकझोरने लगा और इनको अपनी ओर खाली आँखों से देखता हुआ पाकर कहने लगा, 'वकील साहब, कचहरी कब की बन्द हो गयी। सब हाकिम-हुक्काम, वकील-मुवक्किल चले गये। साढ़े पांच बज गये। आप अब भी यहीं बैठे रहिएगा ?'—तब हरखनरायन की समझ में आया कि वे कौन हैं, कहाँ हैं और अभी तक कैसे बैठे रह गये हैं ? याद आने पर वे हड़बड़ा कर उठे और भागकर सड़क पर पहुंचे जहाँ पगली किशोरी कुछ नये दर्शकों से घिरी अपनी उन्हीं खाली आँखों से शून्य में ताकती जा रही थी। आगे बढ़कर फिर ठमक

गये। कुछ सोचकर वे पास की दूकान में चले गये। एक कप चाय लेकर देर तक बैठे रहे। दिन डूब गया। आंखों से अर्द्धनग्न पगली की देह का रस भोगने वाले दर्शकों की भीड़ कुछ हल्की हुई। हरखनारायन उठे। दूकानदार को चाय के पैसे दिये। अपनी उमड़ती हुई भावनाओं पर काबू रखते हुए उन्होंने पहली बार इस सम्बन्ध में मुंह खोला। उस चाय वाले से उन्होंने बताया कि वह पगली उन्हीं के गांव की है। उसको वे उसके घर ले जाना चाहते हैं। वह अधनंगी है। उसका बदन ढँकने को कोई पुराना कपड़ा दूकानदार दे दे तो हरखनरायन उसका बदन ढँक कर उसे रिक्शे पर बिठा कर उसके घर पहुँचा देंगे। चाय वाले की समझ में बात आ गयी या उसने एक वकील गाहक को खुश करने की नीयत से अपनी एक पुरानी धोती दे दी। हरखनारायन ने पगली के बदन के नंगे हिस्सों को फटी मैली धोती से ढँक दिया। बच्चे को उठाकर उसके पैरों के पास रिक्शे में लिटाया। खुद दूसरे रिक्शे पर बैठ कर उसके पीछे-पीछे चले। कुछ कुतूहल और कुछ काले कोट वाले वकील साहब के अदब में रिक्शे वालों ने चलना शुरू किया, लेकिन कहां जाएँ? हरखनरायन के मन में किसी जगह का ख्याल तो आया ही नहीं था। गांव ले जाने की बात तो चाय वाले से वे झूठमूठ में कह गये थे। उनके अवचेतन में अब भी शायद किशोरी की गदराई देह के रस की कोशिश काम कर रही थी। लेकिन कहां ले जाएँ? तब तक दो-चार पैडिल मारने के बाद रिक्शे वालों ने एक साथ ही सवाल किया—'कहां चलें वकील साहब?'

जैसे किसी दूसरे आदमी ने उनके भीतर से उनकी मरजी के बिना ही जवाब दे दिया। हरिजन अफसर के यहां।···रिक्शे वाले खुद भी हरिजन थे और हरिजन कल्याण अधिकारी के आफिस को जानते थे। उधर ही बढ़ चले।

यह कस्बा जिले का हेडक्वार्टर नहीं है। तहसील की कचहरी है। यहां एक मुंसिफ रहते हैं। एक रेवेन्यू अफसर। एक जुडीशियल मैजिस्ट्रेट एक परगना अधिकारी। एक तहसीलदार। कुछ नायब तहसीलदार। थाना है और उसके अहलकार हैं। इसी की बदौलत डेढ़ सौ वकीलों की रोजी-रोटी कांखते-कराहते चलती है। हरिजन कल्याण अधिकारी का

कार्यालय जिले के शहर में था। इस इलाके में हरिजनों की घनी आबादी के कारण इधर कई वर्षों से यह कार्यालय यहीं आ गया है। इलाके के हरिजनों में मन्दिर की तरह पूज्य है यह दफ्तर। इसका पता सब डोम-चमारों को मालूम है। सब समझते हैं कि उन्हें जो कुछ सुख-सम्पदा और कहीं नहीं मिलेगी वह यहाँ जरूर मिल जायगी। इस आफिस को हरिजन आफिस के रूप में सब जानते हैं। इसलिए रिक्शे वालों को कोई कठिनाई नहीं हुई। सीधे चल पड़े।

रिक्शे वाले चल पड़े तो हरखनारायन को ख्याल आया कि वे वहाँ जा रहे हैं जहाँ के बड़े अफसर से उनका परिचय तो है लेकिन जिस रूप में वे उस हरिजन अधिकारी को जानते हैं, उससे तो कोई काम बनने वाला नहीं है। वह अधिकारी खुद जाति का चमार है। बहुत पुराना खुर्राट अफसर है अपने बच्चों के साथ ठाटबाट से उस कोठी को ऐसे सँवार कर रखता है कि अगर उसका, बड़ा सा जूड़ा बाँधने वाली उसकी बीबी का और चटख रंगों के कपड़ों वाले उसके बच्चों का, गहरा काला रंग आड़े न आये तो रहन-सहन से उन्हें अंग्रेज समझ लिया जायेगा। हरखनारायन पहली बार इस आदमी से मिले तो उनको ऐसा लगा था जैसे वह हरखनारायन पर विशेष कृपा करके तब अपने बर्तन में उनको चाय पिला रहा है। फिर भी काम पड़ता तो जाना ही होता था। एक घटना हरखनारायन को खूब याद है। वह अफसर अपने दो बच्चों को बेंत से पीट रहा था। बेतरह मारता जा रहा था और गालियाँ दिये जा रहा था। उसके चेहरे पर ऐसा आक्रामक भाव था कि हरखू उल्टे पाँवों लौट आया। दूसरे दिन उसके चपरासी को अलग बुलाकर जब हरखनारायन ने पूछा था कि कल साहब बच्चों को इस तरह क्यों पीट रहे थे, तो चपरासी ने बताया था कि बच्चे बदमाश हैं। बार-बार साहब उन्हें मना करते हैं, तब भी वे चमारों और भंगियों के बच्चों के साथ खेलने चले जाते हैं। चपरासी ने हरखू को यह भी बताया कि साहब उसको भी डाँटते रहते हैं कि गन्दे चमार-भंगियों के बच्चों को इधर न आने दिया करे। हरखनारायन के मन में उस अफसर को हरिजन जानकर जो सहज भाई-चारा उमड़ आया था, वह गायब हो गया। बाद में साहब से बातें करने

के दौरान हरखनारायन को पता चला था कि साहब के मन में जितनी नफरत बाभन-ठाकुरों के लिए है उससे कम गन्दे रहने वाले हरिजनों के लिए भी नहीं है। साहब को यह लगता है कि गन्दे और अधनंगे रहकर ये आवारा लोग उनकी अफसरी के रुतबे को कम करते रहते हैं। उनका वश चले तो वे इन गन्दे लोगों के लिए अलग जिले बनवा दें।

हरिजन आफिस दिखायी देने लगा तो दो बातों का डर हरखू के मन में एक साथ समा गया। एक डर इस बात का था कि वह अफसर किशोरी को देखते ही बिगड़ खड़ा होगा। रिक्शेवालों के सामने ही हरखू को भी डाँट के भगा देगा। दूसरा डर यह था कि अगर वह अपने यहाँ किशोरी को रख भी ले और फिर उसके नंगे बदन का गाहक बन बैठे तब ?...एकाएक हरखनारायन ने रिक्शेवालों को पीछे मोड़ दिया। कुछ ठमककर वे पीछे मुड़ गये। अब ? अब ? रिक्शेवालों की जबान पर और हरखू के मन में एक साथ ही यह प्रश्न उभरा। तब हरखू को याद आयी अपने मुंशी जी की, जो किसी भी वकील से ज्यादा कानूनदाँ समझा जाता है। वह हरखनारायन जैसे नौसिखिए वकीलों का मेहनताना मुवक्किल से सीधे तय करता है। शाम को दो-चार रुपये वकील साहब को भी पकड़ा देता है। उस मुंशी के कई वकील हैं हरखनारायन जैसे। सभी वकीलों से ज्यादा आमदनी उसी की है। जो भी हो, मुंशी आदमी अच्छा है। दीन-दुखियों की मदद करता है। नेमधरम करता है। शराब-कबाब तो कायथ की छट्ठी में पड़ा होता है, इससे बुरा और अच्छा नहीं होता कोई। दिल बड़ा होना चाहिए। हरखनारायन वकील जानते हैं कि मुंशीजी का दिल बड़ा है। पहुँचने पर वैसा ही स्वागत मिला। हरखू ने मुंशीजी को बताया कि हमारे दूर के रिश्ते की औरत है। बीमार है। दवा कराने में कुछ दिन लगेंगे। एक कोठरी हमको किराये पर कुछ दिनों के लिए दे दीजिए। आगे बढ़कर मुंशी ने स्वागत किया था—'नहीं भाई! तुम्हारे रिश्तेदार से किराया लूँगा मैं। ऐसा ओछा समझ लिया है वकील साहब। शौक से रखो। इनके खाने-पीने का प्रबन्ध भी हो जाएगा।' मुंशी किशोरी को पहचान गया, पर उसे क्या ? वह चुप रहा।

एक हफ्ता बीत गया है। हरखनारायन रोज वहाँ जाते हैं। देर तक

बिलखते हुए लाल-लाल बच्चे को और उसके रोने से बेखबर किशोरी को देखते रहते हैं। उसके आगे बरतन में कभी खाना पड़ा रहता है। कभी नहीं रहता। कपड़े कभी बदन पर रहते हैं, कभी नीचे घिसटते रहते हैं। मुंशीजी की राय से जमादारिन को उसकी कोठरी की सफाई का भार दे दिया गया है। वह दोनों जून कोठरी और किशोरी के बरतन साफ कर जाती है। बच्चे को रुई की बत्ती से दूध पिला जाती है। अपनी बेटी की तरह वह पगली की सेवा करती है। जमादारिन ने पूरे कस्बे में यह बात फैला दी है कि मुंशी जी की कोठरिया में हरखू वकील एक ठो पगली रखे हैं। बहुत सुन्दर, बहुत गोरी है वह पगली। औरतों में यह चर्चा धीरे-धीरे उठ रही है कि वह उपधिया की लड़की है। उपधिया जी नहीं रहे। रहते तो लड़की की यह गत होती भला? उनके पेशाब से चिराग जलते थे। भाई ने घर से निकाल दिया है। रण्डी है। दूसरे का जनमा बच्चा है। इसलिए मरद ने भी घर से निकाल दिया है। भाई है तो क्या करे। कहाँ तक पाप अपने सिर पर बिठाये। 'अरे कैसा भी पाप हो बहिन का मामला है। कैसा कठकरेजी है। कौन है मुंछझौंसा'—हजार तरह की बातें कस्बे में फैलती जा रही हैं। हरखनारायन सुनते हैं, सब कुछ। मुंशी जी भी सुनते हैं। उपाधिया वकील भी सुनते हैं। लेकिन सब अपने-अपने काम में लगे हैं। यह सब औरतों और पागलों का परपंच है। कामकाजी आदमी को बकवास की फुर्सत कहाँ?

हरखनारायन की जिन्दगी, वासना और करुणा के दो पाटों के बीच पिस रही है। जब वे रात को अपने गाँव के घर में होते हैं तो किशोरी की देह के जादू से उनके प्राणों में वह आग धधकती है कि सब कुछ को फूंक कर रख दे। बड़े-बड़े मनसूबे बनाते हैं। बहुत-बहुत तरह से अपने भीतर के पुरुष की ललकार को तर्क और बुद्धि के सहारे ठीक करते हैं। उनकी बुद्धि उनके रक्त के तनाव के आगे परास्त हो जाती है।...जब किशोरी के सामने पहुँचते हैं...उसके तड़पते बच्चे को देखते हैं, उसकी शून्य में भटकती उजड़ी आँखों को देखते हैं...तो रक्त की सारी ऊर्जा मरे हुए केंचुए की तरह शिथिल होकर लटक जाती है। उस कोठरी के दृश्य देखते हैं। आँखें भर आती हैं। कलेजा मुँह को आने लगता है।

…उठकर चले आते हैं। इधर-उधर भटकते हैं। फिर रात को वही हाल। फिर सवेरे वही…।

तिरपाठी की कोठी के तहखाने में मीटिंग हो रही है। गोपाल और मोहन अगुआ हैं बहस के। खूब गरमागरम बहस छिड़ी हुई है। तिरपाठी बहुत दुखी हैं। चुनाव जीत गये हैं लेकिन चेहरा मुरझा गया है। जीत की खुशी में जो लोग तिरपाठी को माला पहनाने आये थे उनको तिरपाठी ने बड़ी गालियाँ दीं। कहा, "साले भाग जाओ सामने से। तुममें से एक-एक आदमी हरामी का पिल्ला है। साले लाखों रुपए खा गये हमारे। रोज़ आकर कहते थे कि यह इलाका सेट है और वह इलाका सेट है। जब काउंटिंग होने लगी तो इलाके पर इलाका साफ होता चला गया। यह तो कहो कि सम्हाला हमारे जिले के अफसरों ने। तुम सालों ने तो बैठा दिया था बधिया। साले चले हैं माला पहनाने। मैं जानता हूँ सालों, कि मैं कैसे जीता हूँ। यह साला है वकिलवा। जब से मैं पावर में आया अपने को मेरा रिश्तेदार कहता है! सुनता हूँ मेरी टंकी पर अपने ट्रैक्टर में डीज़ल भरा लेता था। कि ट्राली भेज रहे हैं प्रचार के लिए और घर जाकर सारा डीजल ड्रमों में भरवा लेता था। लूट मचा दिया था हराम-जादों ने। अब आये हैं माला पहनाने। भाग जाओ सालो, वर्ना कुत्ते छोड़ दूंगा पीछे। एक-एक को देखूंगा।"

बधाई देने वाले उदास मुंह किये लौट गये। इधर गुप्त कमरे में मीटिंग शुरू हो गयी। मीटिंग में खास बात थी क्षेत्र के उन लौण्डों से बदला लेने की, उनको कुचल डालने की, जिनकी वजह से इलेक्शन में इतनी छीछालेदर हुई है। मोहन और गोपाल खूब तैश में हैं। अपने गाँव और जवार के उन चमारों, धोबियो, मेहतरों और छोटी जात के रेखिया उठान लौण्डों के नाम गिनगिन कर लिस्ट में लिखवा रहे हैं जिन्होंने कभी उनकी बेगार करने में आनाकानी की थी। तिरपाठी का सेक्रेटरी जल्दी-जल्दी सारे नाम लिख रहा है। मोहन हरखनारायन का नाम भी लिखा देते हैं। हरखनारायन का नाम सुनकर तिरपाठी सिर उठाते हैं। कहते हैं, 'रुको। यह तो वकील है। इसका नाम इसमें से हटाओ तो एक बढ़िया

स्कीम दिमाग में आ रही है।' मोहन सिर खुजलाते हुए कहते हैं, 'गुरुजी, असल तो यही है। आप समझते क्यों नहीं। सभी चमार-धोबियों के लौण्डों को इसी ने तो बहकाया है। आप इसी को निकाल रहे हैं।'

'तुम मोहन जिन्दगी भर गधे रह जाओगे।'—कहते हैं तिरपाठी। 'अरे भाई, इस साले से निपटने का तरीका दूसरा होगा—बाकी हराम-जादों के लिए वह चाल सोच रहा हूँ कि साले बीसों साल के लिए बन्द हो जायेंगे। जमानत भी नहीं होगी।' मोहन बाबू गद्गद् होकर आँखें मूंद लेते हैं। 'वाह गुरु जी!' अस्फुट स्वर में कहते हैं। तिरपाठी अब स्कीम समझाते हैं। धीरे-धीरे बताते हैं कि 'एक दिन इस तरह के सभी लौण्डों को किसी नाच-वाच के बहाने अपने गांव वाले घर के सामने इकट्ठा करो। पुलिस मैं भेज दूंगा। वहीं कहीं आग लगवा दो। सब साले नक्सली कहकर गिरफ्तार कर लिये जायेंगे। फिर मरें साले जेलों में। कौन पूछने वाला है।'

गोपाल कहते हैं—'यह नक्सली क्या होता है गुरुजी!' डाँटते हैं तिरपाठी, 'चुप रहो, इतनी कम उमर के लड़कों पर दूसरी सीरियस दफा बनेगी ही नहीं। यही एक रास्ता है। यह सब क्या होता है, जानना चाहते हो तो बिहार और बंगाल में जाकर देखो। हुलिया वैरन हो जायेगी। अखबार-वखबार कुछ पढ़ा करो। ऐसे कैसे पालिटिक्स करोगे?' हाँ, तो सुनो, मोहन, तुम अगले हफ्ते अपने यहाँ कुछ इन्तजाम करो। कहा जायगा ये लड़के लूटने और आग लगाकर सबको घर के भीतर जला देने की कोशिश कर रहे थे। जिन्दगी भर साले जेलों में सड़ जायेंगे। सब काम फिट हो जायगा।'

आज की रात हरखनारायन का तनाव उनके मस्तिष्क की शिराओं में ऐसे चढ़ गया है कि लगता है अब अगर उन्होंने इस पार या उस पार कोई निर्णय नहीं लिया तो उनका सर फट जायेगा। वे पागल हो जायेंगे। इधर यह भी सुनने में आ रहा है कि वकील उपधिया उससे बहुत नाराज हैं। कहीं कहा है उपधिया ने, कि यह साला हरखुआ किसी पगली को रखे हुए है और उसे हमारी बहन कहता है। इसको ठिकाने लगाना ही होगा। खबर देने वाले हरखू के हितैषी ने हजार कसमें दिलायी हैं कि हरखू

किसी को उसका नाम न बताये नहीं तो उपधिया जान से मार डालेगा। अपने गांव के गोपाल और मोहन की धमकियों से हरखू पहले से ही चिंतित रहा है। अभी-अभी इलेक्शन बीता है। इलेक्शन में जो-जो धांधलियां इन दोनों ने तिरपाठी के साथ मिलकर की हैं उनका कोई हिसाब नहीं। हरखू को सभी पार्टियों से नफरत है। कोई पार्टी ऐसी नहीं जिसके उम्मीदवारों की ईमानदारी और समझदारी पर भरोसा किया जा सके। कांग्रेस के सत्ता में रहने से हरिजनों की भलाई है।

हरखू हरिजनों के पीछे की बातों को साफ-साफ देखता है। जैसे किसी जबरदस्त बीमार बूढ़े को डाक्टर की मर्जी के खिलाफ कोई लालची आदमी चटपटी चीजें खिलाये और वह बूढ़ा मृत्यु के और करीब खिसकता चला जाये। दूसरी ओर वह डाक्टर को तथा डाक्टर की सलाह के अनुसार पथ्य देने वालों को अपना दुश्मन समझे। ठीक उसी तरह का कुपथ्य दे-देकर ये नेता हरिजनों का वोट लूटते हैं। अभी इसी हफ्ते हरखू ने देखा है कि चमरटोली में तिरपाठी के आदमी रात के दो-दो बजे आते रहे हैं। चमारों को शराब की बोतलें, कम्बल और रुपये बांटते रहे हैं। हरखनारायन को तो चमार ही अपना दुश्मन समझते हैं। उसने उन सबसे सिर्फ यही तो कहा था कि कांग्रेस सरकार तुम लोगों के लिए भला कर रही है। गांधी जी और नेहरू जी भी तुम्हारे भले के लिए सोचते थे। अब तुम लोगों को सुविधाएं मिल रही हैं। तब उसी कांग्रेस को वोट देने के लिए तुम लोग शराब और रुपये पर क्यों बिकते हो। क्यों नही तिरपाठी के दलालों से कह देते हो कि हम लोग तो कांग्रेसी हैं ही, हमें क्यों रुपए और शराब बांटते हो। हरखू की इन बातों से जवार के सभी चमार खौखिया गये। साला वकील हो गया है तो सबसे बड़ा अक्कल का घोड़ा अपने को ही समझता है। इस गदहे को यह भी नहीं मालूम कि वोट तो देना ही है, तब जो दस-पांच रुपए मिल जायें, एकाध कम्बल मिल जाये, एकाध दिन दारू-चिखना हो जाये तो इससे किसी का क्या बिगड़ता है।

हरखनारायन अपनी जाति के हाथी वाले उम्मीदवार की बात भी नहीं समझ पाते। उसकी जानकारी में आधे चमार रुपया और रू

तिरपाठी के आदमियों से ले रहे थे और वोट अपनी जाति वाले को देने की कसम खाये हुए थे। उसकी जाति का उम्मीदवार भीतर-ही-भीतर तिरपाठी से सलाह किये हुए था। कहीं-कहीं तो गाँवों में कहता भी रहा कि अब तुम लोग तिरपाठी को ही वोट दो। तिरपाठी ने जैसे मोहन और गोपाल को मोहरा बनाया था नोट लूटने के लिए वैसे ही एक मोहरा हाथी-छाप हरिजन को भी बनाया था। हाथीछाप वाले ने अपने बिकने का भरपूर दाम वसूल किया था, हरखू को यह बात मालूम है। दूसरे उम्मीदवारों की पोल भी हरखू को मालूम है। किसी की दारू की भट्ठियाँ चलती हैं, उसका पैसा पानी की तरह बह रहा है, किसी की जीपें बुटवल से गाँजे की स्मगलिंग के धन्धे में लगी रहती हैं, उसके लाखों रुपए बहाये जाते हैं।

इतने दुख में भी हरखू को रामराज परिषद वाले पण्डितजी का चुनाव प्रचार याद करके हँसी आती है। पण्डितजी के दो लड़के राजनीति का धन्धा करते हैं। गाँजे और डकैती वाले धन्धों के साथ-साथ उनके ये धन्धे भी चलते हैं। बड़ा लड़का कांग्रेसी है। छोटा कम्युनिस्ट है। पण्डितजी दोनों लड़कों का छुआ पानी तक नहीं पीते। रामराज परिषद् से वे भी उम्मीदवार थे। अकेले एक पीला झण्डा बड़े से गन्ने के टुकड़े में लगाये गांव-गांव घूमते थे। विश्व का कल्याण हो, प्राणियों में सद्-भावना हो, रामराज्य स्थापित हो—यही सब बड़बड़ाते हुए घूमते थे। किसी से यह भी नहीं कहते थे कि मुझे वोट दो। बस, विश्व का कल्याण हो—कहते हुए जिस गांव में जाते थे, वहीं के लड़के झुण्ड बांधकर उनके पीछे हो लेते थे। हरखू सोचता है कि पैसा न खर्च किया जाय और चुनाव लड़ा जाय—ऐसे समझने वाले आदमी की यही दुर्गति होती है। उसे याद आता है, कहीं गांधी जी ने लिखा है, आदर्श उम्मीदवार वही है जो चुनाव में पैसे नहीं खर्च करता, किसी की निन्दा नहीं करता, जनता से झूठे वादे नहीं करता, अपनी तारीफ नहीं करता—सोचते-सोचते हरखू मुस्करा पड़ते हैं। इस ख्याल से तो रामराज्य परिषद् वाले पण्डितजी ही आदर्श उम्मीदवार हैं, जिनको शायद अपने अलावा किसी का वोट नहीं मिला। उसके होठों से हँसी गायब हो जाती है। एक हूक-सी उठती है। ऐसी ही हूक उस समय भी हरखू के मन में

उठी थी जब वे वोट वाले घर में जाकर भी बिना वोट दिये लौट आये थे। वहाँ जाना नहीं चाहते थे। उनके कानूनी ज्ञान ने उन्हें धिक्कारा कि सबसे बड़ा अपराध है अपने मताधिकार का प्रयोग न करना। यह सबसे बड़ी कायरता है। यही सोचकर वे चले गये। कागज हाथ में लेकर सभी चुनाव चिन्हों को दस-बारह बार नीचे से ऊपर तक देख गये किसी पर ठप्पा लगाने की हिम्मत नहीं पड़ी। कागज को बिना ठप्पे के लपेटकर बक्से में घुसेड़ा और बाहर निकल आये।

गांव में इसी चुनाव की राजनीति से अब भी आग लगी हुई है। सवेरे ही पता नहीं किस बात पर मोहन और गोपाल के गुण्डों के बीच भिड़ गयी। दोनों ओर से पचासों कट्टे निकल आये। पन्द्रह-पन्द्रह साल के दुधमुंहे बच्चों की जेब में देसी पिस्तौल ठुंसी रहती है। आज दोनों दलों ने इस तरह की पावर की आजमाइश हो ही गयी। कई लोग अस्पताल में पड़े हैं। दोनों ठहरे तिरपाठी के आदमी। दोनों उसी के पास जाकर फ़रियाद करते हैं। उसका काम निकल गया है। वह दोनों को बेवकूफ बना रहा है। तिरपाठी तो यह भी सोचता है कि ये सब आपस में मरेंगे-खपेंगे नहीं तो हजार तरह के काम हमसे लेते रहेंगे। इसलिए तो यही ठीक है। लड़ें। आपस में लड़ते रहेंगे, तब तक हमारा पिण्ड छोड़े रहेंगे।

यह झगड़ा पूरे जवार का दिल दहला देने वाला था। गांव में इसकी चरचा महीनों तक चलती रहती, मगर इसी गांव में आज ही दो घटनाएँ ऐसी हो गयी हैं कि गांववाले सवेरे की मारपीट भूलकर उसी की चर्चा में लग गये हैं। ऐसी भयानक मारपीट वाली घटना सिर्फ उन्हीं परिवारों में चर्चा और दुख का कारण बनी हुई है जिनके लड़के चोट खा गये हैं, जिनके घरों के लोग अस्पतालों में हैं और सारा परिवार बिना खाये-पीये शोक में डूबा हुआ है। इन परिवारों को अपने-अपने दुख में डूबते-उतराते छोड़कर बाकी सारा गांव कुतूहल, आतंक और किसी आने वाले भयानक दुख की काली छाया को देखकर सहम रहा है। बूढ़े-बूढ़ियों को काली माई वाली घटना आतंकित किये हुए है।

गांव में डीह, बरमहट्ठी, काली के थान हैं। काली माई की मानता

से वड़े-से-वड़ा काम जादू की तरह हो जाता है। गाँव की महामारी का इलाज काली माई हैं। वाढ़-सूखे का उपचार काली माई हैं। विद्यार्थियों को इम्तहान में पास कराने वाली काली माई हैं। गंजेड़ियों के लिए जुगाड़ काली माई हैं। चोरों की रक्षा करने वाली काली माई हैं। गरज यह कि जिसका जो काम हो और जव हो, काली माई को माथा नवाये विना निस्तार नहीं। काली माई के थान पर हर साल सावन में दो-तीन रुपया घर पीछे भेर (चन्दा) लगता है। कई सौ रुपए इकट्ठे होते हैं। आठ-दस घरों के वावाजी लोग ऐसा तर-माल चाँपते हैं कि कई दिनों तक उन लोगों के घरों में चूल्हे जलाने की नौवत नहीं आती। वावाजी लोग नाक वहाते नंग-धड़ंग देवताओं के साथ कालीथान पर भोजन करने आ जाते हैं। पंडिता इनें कैसे आयें? पण्डिताइनों के लिए छन्ना जाता है। हर घर में जितनी औरतें हैं—मोटे हिसाव से समझिये उतने सेर पूड़ी। इसलिए भोज के वाद कई दिन तक प्रसाद से तृप्ति मिलती रहती है। पूजा चढ़ने के समय गाँव के दूसरे लोगों को एक-एक पूड़ी के चौथाई टुकड़े का प्रसाद मिल जाता है— छोटे वच्चों को वह भी नहीं—कभी-कभी ज्यादा शोर करने पर वाटने वाले वावाजी की खड़ाऊँ की ठोकर या भद्दी गाली। प्रसाद मिले चाहे गाली—काली माई के प्रति श्रद्धा कभी कम नहीं होती। यहाँ तक कि जुलाहों के परिवार भी काली माई को कराही चढ़ाते हैं, नौमी पूजते हैं। काली माई के प्रति आतंक और श्रद्धा की भावना सव लोगों में वरावर है।

जैसा आतंक और जैसी श्रद्धा गाँव वालों के मन में काली माई के प्रति है—उससे थोड़ी ही कम है छोटका वावू के प्रति। छोटका वावू गाँव के सवसे वड़े जमींदार के पुत्र हैं—वाप वड़का वावू थे, वेटा छोटका वावू है। वाप खेत खरीदने में कुछ उठा नहीं रखते थे—वेटा खेतों को वेचने में कुछ उठा नहीं रखता। वाप की सिधाई का यह हाल था कि उन्हीं के सामने उन्हीं के खेत में मजूरी करने वाली चमाइनें उनको गरियाती थीं। वे अनसुना करके आगे वढ़ जाते थे। लौटकर थोड़ी देर में आते थे। अपनी वाहें गाली देने वाली की ओर फैलाकर कहते थे कि देखो तो कहीं गड्ढा पड़ा है इनमें? तव तुम काहे गरिया रही थीं। उनको

गरियाने वाली धरती में समा जाना चाहतीं। बड़का बाबू की सिधाई के बावजूद उनका सिक्का सारे गांव पर चलता था—आसपास के गांवों के लोग उनकी कदर करते थे। उनसे डरता कोई नहीं था—प्यार उनको सब करते थे। उनकी शिकायत करने वाले, उनको गालियां देने वाले भी इस भाव से शिकायतें करते थे और गालियां देते थे जैसे बिगड़ैल बेटा मां से नाराज हो गया हो और गरियाते रहने के साथ-साथ मां की गोदी की ओर ललक के साथ ताकता जा रहा हो।—बड़का बाबू गांव भर के माई-बाप थे—छोटका बाबू गांव भर के बाप हैं—सब डरते हैं उनसे। प्यार उनको कोई नहीं करता। गाली देने की बात कोई सोच भी नहीं सकता, लेकिन उनको देखकर अच्छा किसी को नहीं लगता। सब उनकी राह बचाकर चलना चाहते हैं। गोपाल और मोहन बाबू नये धनिक हो गये हैं—छोटका बाबू के आधे से अधिक खेत वे लोग खरीद चुके हैं, लेकिन गांववालों की मदद आगे बढ़कर छोटका बाबू ही करते हैं। इसलिए उनकी गालियां खाकर भी लोग उनके खिलाफ सोचते नहीं—हां, जब बड़का मालिक की याद आती है तो कलेजा फटने लगता है उनका। छोटका मालिक गांव की शोभा हैं। जवार के नामी-गरामी लोग उन्हीं के पास आते हैं। पंचाइत में अब उन्हीं की बात सबसे ऊपर रहती है क्योंकि न मानने वाले की छाती चरमरा जाने का डर बना रहता है। छोटका बाबू दिनभर दूसरे रूप में रहते हैं और रातभर दूसरे रूप में। रात को पी लेने के बाद उनके लिए सब लोग देवता रूप हो जाते हैं। कभी-कभी पीकर लौटते हैं तो हाथों में जलती हुई अगरबत्तियां होती हैं। जो आदमी सामने पड़ जाता है उसी की आरती करने लगते हैं। सामने वाला आदमी अगर भागने की कोशिश करे तो बढ़कर वो हाथ देते हैं कि दांत हिल जाते हैं या कमर टूट जाती है। कालीमाई के बड़े भारी भगत हैं छोटका बाबू। सवेरे उनको प्रणाम करके ही अन्न-जल ग्रहण करते हैं। कभी-कभी तो रात-रात भर उनके थान की परिक्रमा करते रहते हैं। बीच-बीच में बोतलें खाली करते जाते हैं। पूजा के दिन सबसे ज्यादा भेंट देते हैं। अपने हाथ से खरहरा उठाकर थान की पूरी चौदही बहारते हैं। तभी उनके हाथ में खरहरा दिखायी देता है। उनके अपने दरवाजे पर तो

ती है कि उसी के नाते प्यारू को इतनी जिल्लत उठानी पड़ रही है। के कारण बाभनों की यह कचकच तिवारी के घरवालों का जीना न किये हुए है। शहनाज को अपने और प्यारू तिवारी के प्यार के वाले दिनों की याद आती है तो इस दुख में भी उसके बदन में एक फुरी उठकर नये सिरे से उसे ताजा कर जाती है। गांव के लोग भी बात का बतंगड़ बनाने पर तुल गये थे। जिस दिन वे लोग साथ पकड़े गये थे—उसके तीसरे दिन ही गांव से भाग गये थे। से भाग कर कितना-कितना भटकना पड़ा था प्यारू और शहनाज। प्यारू भूखा-प्यासा नौकरी की तलाश करता एक शहर से दूसरे र भटकता रहा। जो कुछ घर से लाया हुआ दोनों के पास था वह म होने को आया। उस समय वह प्यारू से ,कहती कि वह अपने गांव जाय। वहां उसका कुछ नहीं बिगड़ेगा। मर्द की जात का धरम नहीं ता। शहनाज को बांहों में भरकर प्यारू शरारत से पूछता—मैं गांव जाऊंगा। ठीक है। तुम क्या करोगी यहां? शहनाज के मन में तो रहना कि वह कहीं डूब कर या रेलगाड़ी के नीचे आकर जान दे देगी—किन प्यारू की बांहों में खो जाती और उसके छेड़ने पर कह देती तुम्हारे थ चलूंगी। दोनों हंस पड़ते। धीरे-धीरे वह हंसी विलीन होने लगती एहसास की चोटों में, कि क्या करें, कहां जायें, किससे अपना विपद हें!

एक दिन ऐसा आ गया कि कुछ खाने तक का जुगाड़ नहीं रहा। रू अपने को बार-बार धिक्कार रहा था। कुछ समझ में न आने पर ह कलकत्ता के चौबीस परगना इलाके में पहुंच गया था, इस आशा में गांव जवार के बहुत से लोग वहां चटकलों में काम करते हैं। उसे ई काम दिला देंगे। गांव के दो-चार लोगों से मिलकर उसने जान लिया शहनाज के साथ उसके गांव से भाग जाने की खबर उसके कलकत्ता ने से बहुत पहले वहां पहुंच गयी है। उस खबर का ही जादू था कि जो ग गांव में प्यारू तिवारी के सामने सीधे खड़े नहीं हो सकते थे, उसके साथ बात करने से कतरा रहे थे। दो-चार दिनों में उसने जान या कि उसके गांव जवार के लोग उसकी मदद तब करेंगे जब वह

शहनाज को छोड़ देगा या उसे हिन्दू बना लेगा। शहनाज के हिन्दू बनने या प्यारू तिवारी के मुसलमान बनने की बात दबे-छिपे गाँव में उनके भागने के पहले भी उठी थी। शहनाज की माँ ने अपनी जाति वालों को इस बात पर राजी कर लिया था कि अगर प्यारू मुसलमान बन जाये तो खुशी से उसका निकाह शहनाज के साथ कराया जा सकता है। जब उसने शहनाज से यह बात बतायी थी तो शहनाज ने साफ इनकार कर दिया था। उसने माँ से दो-टूक करके कह दिया था कि वह प्यारू को प्यारू के रूप में प्यार करती है, हिन्दू या मुसलमान के रूप में नहीं। वह सोच भी नहीं सकती कि प्यारू के सामने वह कोई शर्त रख कर उससे प्यार करेगी। यह बात जब उसने प्यारू को बतायी तो प्यारू को अपनी ही नजर में अपने ओछेपन के कारण गिर जाना पड़ा था क्योंकि ठीक उसी वक्त वह यह सोचकर आया था कि अपने साथियों के इस प्रस्ताव की बात वह शहनाज को बता देगा कि अगर शहनाज हिन्दू हो जाय तो वे लोग गाँव के बामनों को मना लेंगे। शहनाज का निश्चय सुनकर प्यारू चुप रह गया। जब वही प्रस्ताव उस दूर देश में उसके सामने आया तो वह तिल-मिला गया। ठीक उन क्षणों में जब आदमी निराशा की पकड़ में आकर जिन्दगी का सहारा छोड़ देता है और मौत की बाँह पकड़ लेता है···प्यारू और शहनाज को एक बूढ़े मुसलमान की ममता अपने आप मिल गयी, जैसे कोई जादू हो गया।

शाहनवाज खाँ—यही नाम था उस अस्सी वर्ष के बूढ़े का जिसके बेटे-नाती उसे छोड़कर पाकिस्तान चले गये थे। वह अपनी धरती छोड़कर नहीं जा सकता था। उसका कारोबार ईमानदारी और रोजगार की समझ की बुनियाद पर आजादी के बाद दिन दूना-रात चौगुना बढ़ता गया। अपना कहने के नाम पर उसके पास दूर का कोई रिश्तेदार तक नहीं था। एक बूढ़ा नौकर था जिसके सहारे इस बूढ़े की जिन्दगी कट रही थी। उस दिन वह बूढ़ा नौकर भी चल बसा था। सारे मुहल्ले के लोगों को चक्कर में डालता हुआ बूढ़ा शाहनवाज खाँ ऐसे रो रहा था जैसे कोई अपने जवान बेटे की मौत पर रोये। उसी दिन प्यारू और शहनाज को पता चला कि जिस कोठरी में वे लोग ठहरे हुए हैं। उसका असली

सोचती है कि उसी के नाते प्यारू को इतनी जिल्लत उठानी पड़ रही है। उसी के कारण बाभनों की यह कचकच तिवारी के घरवालों का जीना हराम किये हुए है। शहनाज को अपने और प्यारू तिवारी के प्यार के शुरू वाले दिनों की याद आती है तो इस दुख में भी उसके बदन में एक झुरझुरी उठकर नये सिरे से उसे ताजा कर जाती है। गाँव के लोग तब भी बात का बतंगड़ बनाने पर तुल गये थे। जिस दिन वे लोग एक साथ पकड़े गये थे—उसके तीसरे दिन ही गांव से भाग गये थे। गांव से भाग कर कितना-कितना भटकना पड़ा था प्यारू और शहनाज को। प्यारू भूखा-प्यासा नौकरी की तलाश करता एक शहर से दूसरे शहर भटकता रहा। जो कुछ घर से लाया हुआ दोनों के पास था वह खतम होने को आया। उस समय वह प्यारू से ,कहती कि वह अपने गाँव लौट जाय। वहाँ उसका कुछ नहीं बिगड़ेगा। मर्द की जात का धरम नहीं जाता। शहनाज को बाँहों में भरकर प्यारू शरारत से पूछता—मैं गाँव चला जाऊँगा। ठीक है। तुम क्या करोगी यहाँ? शहनाज के मन में तो यह रहता कि वह कहीं डूब कर या रेलगाड़ी के नीचे आकर जान दे देगी—लेकिन प्यारू की बाँहों में खो जाती और उसके छेड़ने पर कह देती तुम्हारे साथ चलूंगी। दोनों हँस पड़ते। धीरे-धीरे वह हँसी विलीन होने लगती इस एहसास की चोटों में, कि क्या करें, कहाँ जायें, किससे अपना विपद कहें!

एक दिन ऐसा आ गया कि कुछ खाने तक का जुगाड़ नहीं रहा। प्यारू अपने को बार-बार धिक्कार रहा था। कुछ समझ में न आने पर वह कलकत्ता के चौबीस परगना इलाके में पहुँच गया था, इस आशा में कि गांव जवार के बहुत से लोग वहाँ चटकलों में काम करते हैं। उसे कोई काम दिला देंगे। गांव के दो-चार लोगों से मिलकर उसने जान लिया कि शहनाज के साथ उसके गाँव से भाग जाने की खबर उसके कलकत्ता आने से बहुत पहले वहाँ पहुंच गयी है। उस खबर का ही जादू था कि जो लोग गांव में प्यारू तिवारी के सामने सीधे खड़े नहीं हो सकते थे, वे उसके साथ बात करने से कतरा रहे थे। दो-चार दिनों में उसने जान लिया कि उसके गांव जवार के लोग उसकी मदद तब करेंगे जब वह

उसी इसी मौके पर बाबा लोगों में कुछ कहा-सुनी हो गयी। एक गोल के लोग भोजन करने को तैयार थे। दूसरी गोल के लोग कहते थे कि इससे धरम चला जायेगा। प्यारू धरम का दान कुछ और बढ़ाने को तैयार हो गये। तब भी बात कुछ बन नहीं रही है। कहीं ऐसा न हो कि सारा किया-कराया चौपट हो जाये। बाबा लोग बिना खाये ही लौट जायें। तिवारी जी सबके सामने गिड़गिड़ा रहे हैं। बाबा जी लोग धरम का मोल कुछ और ऊँचा करने में लगे हुए हैं। गाँव के लोग तमाशा देख रहे हैं···शाम हो गयी है। तकरार खतम ही नहीं हो रही है।

बँगले की कोठरी में बैठी शहनाज को लग रहा है कि इतनी बड़ी बेइज्जती प्यारू की और उसके बाप की जो हो रही है, उसकी जड़ शहनाज ही है। वह कोठरी से बाहर नहीं निकल पा रही है। बैठी-बैठी छटपटा रही है। क्या करे वह? कैसे यह सब तमाशा बन्द हो?

एक ओर गाँव की यह हलचल, दूसरी ओर हरखू के मन की भयानक उथल-पुथल। पिछली रात को वे सो नहीं सके। रात भर छटपटाते रहे। सबेरे से गाँव में यही सब हुड़दंग चल रहा है। जितनी अशान्ति गाँव में है, उससे कहीं ज्यादा हरखनारायन के मन के भीतर है। आज की रात वे कुछ निर्णय करके ही रहेंगे। यही सब सोचते हुए हरखनारायन मुन्शी जी के घर के पास आ गये।

किशोरी की कोठरी का दरवाजा खुला है। कोठरी में दिये की रोशनी अँधेरे-उजाले का फर्क करने भर के लिए जल रही है। किशोरी की आँखें हमेशा की तरह खुली हुई हैं। दीवाल के सहारे सीधी बैठी हुई किशोरी के शरीर से सारे कपड़े अलग हैं। कमर में लिपटी हुई साड़ी का रहना भी न रहने के बराबर है। उसकी गोरी देह की हर रेखा आमंत्रित करती हुई खुली है। उससे कुछ दूर रोटी या ऐसी ही किसी चीज के टुकड़े को हाथों में भींचे माँस के लोथड़े जैसा बच्चा पड़ा है। अपनी जिन्दगी के बीस-पचीस दिनों में शायद उस बच्चे को यह पता चल गया है कि रोने से कुछ होने वाला नहीं है। हरखनारायन यही नहीं समझ पाते कि बच्चा जिन्दा कैसे है। इस समय उनका ध्यान बच्चे की ओर नहीं

रहा है। किशोरी की खुली हुई देह का बुलावा उन्हें जितनी ज़ोर से अपनी ओर खींच रहा है, उसकी शून्य में खोयी हुई स्थिर, जड़ आंखें उतनी ही दूर ठेल रही हैं। कुछ भी हो, आज वे किशोरी से बात करेंगे ही। लाख पगली हो, कुछ तो बोलेगी। कुछ तो कहेगी। भीतर उमगती हुई करुणा के ज़ोर से, या रक्त की तेज़ी के दबाव में हरखनारायन के पांव जो कोठरी के दरवाज़े पर ठमक गये थे, उठ पड़ते हैं। वे सीधे किशोरी के सामने पहुंच जाते हैं। घुटनों के बल बैठकर उसके दोनों कन्धे अपने दोनों हाथों में पकड़कर उसकी आंखों में झांकने की कोशिश करते हैं। किशोरी की आंखों में झांकने की कोशिश के ठीक पहले उसके कन्धों पर पड़े अपने हाथों की छुअन की जड़ता से वे चौंक पड़ते हैं। उनके हाथ कांप जाते हैं। उस कम्पन के साथ ही किशोरी का शरीर मुंह के बल उनके पैरों पर लुढ़क जाता है। हरखनारायन अपने अन्दर से निकल पड़ने वाली चीख से चौंक उठते हैं। उसी चीख के सहारे मुन्शी जी भागते हुए कोठरी में आ जाते हैं। हरखनारायन को उठाकर एक ओर खड़ा करने के बाद मुन्शी जी किशोरी के शरीर को उठाकर सीधा करते हैं। वह कब की मर चुकी है।

मुन्शी जी किशोरी की लाश को सीधा लिटाकर उसी का साड़ी से उसे पूरा ढंक देते हैं। हरखनारायन पत्थर की तरह खड़े हैं। मुन्शी जी उनका हाथ धीरे से छूते हैं। हरखू अपनी भरी हुई आंखें मुन्शी जी की ओर उठा देते हैं। मुन्शी जी मशीन की तरह इतना ही कह पाते हैं, 'जमादारिन ने उपधिया वकील को चोर की तरह किशोरी की कोठरी से बाहर निकलते देखा।'

इस मौत पर कौन रोता? बच्चा कोठरी में वैसा ही पड़ा है। हरखनारायन की आंखों में वही शून्य आ बसा है जो किशोरी की आंखों में है।